पंजीयन संख्या-69904/98
डाक पंजीयन संख्या-एसएसपी/एल०डब्ल्यू०/एन०पी०/318/2020-2022

ओ३म्

शृण्वन्तुविश्वे अमृतस्य पुत्राः

आर्य्य लोक वार्ता

लखनऊ से प्रकाशित वैदिक विचारधारा का हिन्दी मासिक

वर्ष-२४, अंकः-१, जुलाई, सन्-२०२१, सं०-२०७७वि०, दयानंदाब्द १९७, सृष्टि सं० १,९६,०८,५३,१२१; मूल्य : एक प्रति ५.००रु., वार्षिक सहयोग १००.०० रुपये

प्रसंगवश

श्रीराम ने अपने उच्च चरित्र से पुनः स्थापित किया था आदर्श वैदिक समाज

आदर्श समाज स्वतः नहीं बना करते

-पं.शिव कुमार शास्त्री-

इतिहास पर एक दृष्टि डालें तो उससे यही पता लगता है कि महापुरुषों ने अपने ऊँचे विचार और आचार से ही मनुष्य-समाज का नैतिक और व्यावहारिक स्तर ऊँचा करके सुख और शान्ति प्रदान की। सतयुग का तो इतिहास उपलब्ध नहीं होता। इतिहास की कड़ियाँ त्रेतायुग की जो झाँकी हमारे सम्मुख उपस्थित करती हैं, उनसे इस बात की पुष्टि होती है।

त्रेतायुग के आते-आते वैदिक मर्यादाएँ शिथिल होने लगी थीं। महाराज दशरथ ने ही एक-पत्नीव्रत की मर्यादा का पालन नहीं किया। किन्तु उस समय राम जैसे महापुरुष ने अपने उच्च चरित्र और असाधारण सहिष्णुता से शिथिल वैदिक आदर्शों को पुनः स्थापित किया।

राम ने पुत्र, भाई, मित्र, पति और राजा आदि के सभी सम्बन्धों को आदर्श रूप में उपस्थित किया। विषम-से-विषम परिस्थिति में भी वह दृढ़ रहे। वाल्मीकि ने राम में कुछ ऐसे गुणों का वर्णन किया है, जो लोकोत्तर कहे जा सकते हैं। राम की बोल-चाल का वर्णन देखिये-

स च नित्यं प्रशान्तात्मा मृदुपूर्वं च भाषते।
उच्यमानोऽपि परुषान्नोत्तरं प्रतिपद्यते।।

-राम सदा शान्त रहते थे। बहुत मीठी भाषा बोलते थे। यदि कोई कटु भाषण करता था, तो उस कड़वी बात का उत्तर ही नहीं देते थे।

राम के व्यवहार का आदर्श भी देखिये-

कदाचिदुपकारेण कृतेनैकेन तुष्यति।
न स्मरत्यपकाराणां शतमप्यात्मवत्तया।।

-यदि कोई राम के साथ एक भी उपकार का काम कर दे तो वे इतने से ही सन्तुष्ट हो जाते थे। उनको हानि पहुँचाने के लिए कोई शतशः विपरीत काम करता था, तो भी वे अपने आत्मिक बल के कारण उसकी परवाह नहीं करते थे।

इन महान् गुणों के परिणाम स्वरूप ही वह रामराज्य स्थापित हो सका, जिसे आज लाखों वर्ष बाद भी हम याद करते हैं। राम अपनी सूझ-बूझ से अपने पारिवारिक जनों और अपने भाइयों को न सम्भालते, तो फिर न जाने राम के घर की भी क्या दशा होती? उदाहरण के लिए एक दृष्टि डालिए-

राम के वनवास की बात सुनकर लक्ष्मण राम के पास आए और यह परामर्श देने लगे कि आपको वन नहीं जाना चाहिए। इस सम्बन्ध में आपको किसी को कुछ कहने अथवा करने की आवश्यकता नहीं है। सब-कुछ आप मुझपर छोड़ दीजिये। राम ने लक्ष्मण को समझाया। लक्ष्मण ने पिता के प्रति कठोर शब्दों का प्रयोग किया तो झिड़का भी। सीता और लक्ष्मण के साथ राम वन में चले गए। वहाँ चित्रकूट में डेरा डाला। राम और सीता की सुरक्षा के लिए लक्ष्मण सदा तत्पर रहते।

इधर ननिहाल से भरत बुलाए गए। उन्हें सारी परिस्थिति जानकर अत्यंत वेदना हुई। पिता की अन्त्येष्टि के बाद भरत ने मन्त्रिमण्डल और चुने हुए लोगों की सभा बुलाकर राम को वन से वापस बुलाने का विचार किया। सभा के निश्चय के अनुसार भरत तीनों माताओं और सभी मन्त्रियों के साथ राम को वापस लाने के लिए वन में गए। भरत के साथ उस समय की रीति के अनुसार बहुत-सी सेना (नौ लाख-वा.रा.अयो.८३) थी।

सेना के हाथियों, घोड़ों और रथों की धूल का घटाटोप आकाश में उठता हुआ लक्ष्मण ने चित्रकूट पर्वत की ऊँचाई से देखा और राम से कहा कि कोई सेना लेकर हमारी ओर आ रहा है। ज्यों-ज्यों धूल चित्रकूट की ओर बढ़ रही थी, लक्ष्मण की परेशानी भी उतनी बढ़ती जाती थी। उस समय राम की लापरवाही देखकर झुँझलाकर लक्ष्मण ने कहा-'आप तो ऐसे उदासीन हो गए हैं, जैसे संसार में जीना ही नहीं है। कोई सेना लेकर इधर आ रहा है, तो सोचना चाहिए कौन है? और क्यों आ रहा है?'

राम ने लक्ष्मण की व्याकुलता को देखकर उसी से पूछा-'तुम्हीं अनुमान लगाओ--कौन हो सकता है?' अब

लक्ष्मण का उत्तर वाल्मीकि के शब्दों में (अयोध्या काण्ड) पढ़िये-

सम्पन्नं राज्यमिच्छंतु व्यक्तं प्राप्याभिषेचनम्।
आवां हन्तुं समभ्येति कैकेय्या भरतः सुतः।।

-स्पष्ट है कि राज्य प्राप्त करके भरत अपने राज्य को निष्कंटक बनाने के लिए सेना लेकर हम दोनों को मारने आ रहा है-

गृहीतधनुषावावां गिरिं वीर श्रयावहे।
अथवेहैव तिष्ठावः सन्नद्धावुद्यतायुधौ।।

-आइये हम दोनों धनुष-बाण लेकर पहाड़ पर चढ़ चलें अथवा शस्त्रास्त्र से लैस होकर यहीं मोर्चा सम्भाल लें।

सम्प्राप्तोऽयमरिर्वीर भरतो वध्य एव मे।
भरतस्य वधे दोषन्नहि पश्यामि राघव।।

-यह हमारा शत्रु भरत स्वयं ही आ रहा है और सर्वथा मारने योग्य है। हे राघव! मैं भरत के मारने में कोई दोष नहीं देखता।

पूर्वापकारिणं हत्वा नह्यधर्मेण युज्यते।
पूर्वापकारी भरतस्त्यागे धर्मश्च शाश्वतः।।

-पहले घात करनेवाले को मारने में कोई पाप नहीं लगता। भरत ऐसा ही है, अतः इसका परित्याग धर्मानुकूल है।

राम लक्ष्मण के उत्तर को सुनकर छटपटा गए और कहने लगे-

धर्ममर्थञ्च कामञ्च पृथिवीं चापि लक्ष्मण!
इच्छामि भवतामर्थे एतत् प्रति शृणोमि ते।।

-हे लक्ष्मण! धर्म, अर्थ, काम और इस सारे राज्य को भी मैं तुम भाइयों को सुख पहुँचाने की दृष्टि से चाहता हूँ, यह मैं तुझे विश्वास दिलाता हूँ।

नेयं मम मही सौम्य दुर्लभा सागराम्बरा।
नहीच्छेयमधर्मेण शक्रत्वमपि लक्ष्मण।।

-हे सौम्य लक्ष्मण! मेरे लिए सागर पर्यन्त समस्त पृथिवी प्राप्त करना कोई कठिन नहीं है, किन्तु मैं अधर्म से इन्द्र पद भी प्राप्त करना नहीं चाहता।

यद्विना भरतं त्वाञ्च शत्रुघ्नं वापि मानव।
भवेन्मम सुखं किंचिद् भस्म तत् कुरुतांशिखी।।

-हे लक्ष्मण! भरत, तुझे और शत्रुघ्न को छोड़कर यदि मुझे कुछ सुख प्राप्त हो भी, तो ऐसे सुख को मैं आग लगाना पसन्द करूँगा।

(शेष पृष्ठ 3 पर)

विनय पीयूष

पुरुष की कल्पना

यत्पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन्।
मुखं किमस्यासीत् किं बाहू किमूरू पादाऽउच्येते॥
ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः।
ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्याꣳशूद्रोऽअजायत॥

(ऋग्वेद 10/90/11व12)

जब होती है कल्पना पुरुष की तरह-तरह;
सोचते, पुरुष है निराकार,
तो, फिर तो, उसका मुख क्या है?
बाहुएँ कौन? है उदर कौन?
है कौन कहे जाते पद इस अशरीरी के?

तो ब्राह्मण को मुख बना दिया,
बाँहें क्षत्रिय को;
वैश्य सदृश ऊरू के,
शूद्र पद के जाए!

यह पुरुष ब्राह्मणों के मुख से बातें करता,
क्षत्रिय की बाँहों से रक्षा जग की करता,
वैश्यों के ऊरू पर थामे रखता समाज,
यह कर्मवीर शूद्रों के पैरों से चलता!

यूँ होती है कल्पना पुरुष की तरह-तरह!

काव्यानुवाद : अमृत खरे

सम्पादकीय

योगी की परिकल्पना

एक सच्चे योगी का मन शिवसंकल्पों से समृद्ध होता है (तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु-यजुर्वेद, अ.३४, मं.१-६) और उसके मस्तिष्क में लोक कल्याणकारी विचार और परिकल्पनाएँ निरन्तर आती रहती हैं (आनो भद्राः क्रतवो यन्तु-यजुर्वेद, अ.३४, मं.१४)- इसे वैदिक विचारधारा की दृष्टि से देखा जाये तो- उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री श्री योगी आदित्यनाथ नाम के ही योगी नहीं हैं, सच्चे अर्थों में योगी हैं क्योंकि उनके पास कल्याणकारी श्रेष्ठतम विचारों की सम्पत्ति मौजूद रहती है। एक श्रेष्ठ स्वप्न द्रष्टा ही युगनिर्माता बन सकता है- यह शक्ति योगी आदित्यनाथ में वास करती है- इसमें कोई संदेह नहीं रह जाता है। अभी हाल में अयोया को 'वैदिक-नगरी' का स्वरूप देने की योगी आदित्यनाथ की परिकल्पना हमारे मन्तव्य को प्रमाणित करती है।

शान्त सलिला- पवित्र तोया- सरयू के तट पर बसी हुई अयोध्या का त्रेता युगीन स्वरूप पूर्णतया वैदिक था। महर्षि वाल्मीकि ने अयोध्या के वैदिक आध्यात्मिक स्वरूप का सविस्तार चित्रण किया है। परवर्ती हिन्दी कवियों ने भी अयोध्या के वैदिक स्वरूप की नयनाभिराम झाँकी प्रदर्शित की है। सरयू तट पर बसी हुई अयोध्या के वैदिक आध्यात्मिक स्वरूप की ओर इंगित करते हुए श्रीराम कहते हैं-

जन्मभूमि मम पुरी सुहावनि। उत्तर दिशि सरयू बह पावनि।।
अतिप्रिय मोहिं इहाँ के बासी। मम धामदा पुरी सुखरासी।।

इस अयोध्या की विशेषता क्या है? गोस्वामी तुलसीदास जी के शब्दों में-

दंड जतिन्ह कर भेद जँह, नर्तक नृत्य समाज।
जीतिय मनहिं सुनिय अस, रामचन्द्र के राज।।

अयोध्या में अगर किसी के पास दंड है, तो वह यती-साधुओं के पास नर्तक नृत्यशालाओं में ही मिलते हैं और चारों तरफ एक ही चर्चा रहती है कि मन पर विजय कैसे प्राप्त की जाय। अर्थात् मन को वश में करने हेतु प्राणायाम आदि योगाभ्यास की क्रियायें होती रहती हैं। आचार्य केशवदास ने 'रामचन्द्रिका' काव्य में इसे और भी स्पष्ट किया है-

मूलन ही कि जहाँ अथोगति केसव गाइय,
होम हुतासन धूम नगर एकै मलिनाइय।।

इन पंक्तियों में ज्ञात होता है कि अयोध्या में घर घर में नित्य प्रति यज्ञादि होते रहते थे। आधुनिक युग के कविश्रेष्ठ मैथिलीशरण गुप्त 'साकेत' महाकाव्य में अयोध्या के सरयू तट पर बसे होने का इन शब्दों में वर्णन करते है-

स्वर्ग की तुलना उचित ही है यहाँ,
किन्तु सुरसरिता कहाँ, सरयू कहाँ?
वह मरों को मात्र पार उतारती,
यह यहाँ से जीवितों को तारती।।

कदाचित् सरयू की इसी सत्ता-महत्ता समन्वित शान्त एवं उदात्त प्रकृति पर्यावरण को दृष्टिगत रखते हुए, भारत-परिभ्रमण करते हुए, परिव्राजकाचार्य महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज भाद्रकृष्ण-१४, संवत् १९३३वि. अर्थात् १८ अगस्त सन् १८७६ को सरयूबाग में चौधरी गुरुचरणलाल के मंदिर में उतरे और भाद्रशुक्ल प्रतिपदा, संवत् १९३३वि. अर्थात् २० अगस्त, १८७६ को वेदभाष्य लिखना प्रारंभ किया। इसी वेदभाष्य का प्रामाणिक दस्तावेज है-'ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका'। जिस सरयू के तट पर श्रीराम का शैशव बीता। वे श्रीराम- जिनकी साँस साँस में वेद-ज्ञान समाहित था- 'जाकी सहज साँस श्रुतिचारी' (गोस्वामी जी)-उन्हीं श्रीराम की जन्मस्थली, क्रीड़ाभूमि, कलकल निनादिनी सरयू के तट पर बैठकर ऋषि दयानन्द द्वारा वेदभाष्य का श्रीगणेश करना- मात्र संयोग नहीं था वरन् एक महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक घटनाक्रम का घटित होना है। इस मुहूर्त को लिपिबद्ध करने, शिल्पबद्ध करने और एक भव्य-दिव्य स्मारक का रूप देने से दो योगियों की परिकल्पनायें साकार होंगी। एक योगी- दयानन्द सरस्वती ने सन् १८७६ में सरयूबाग में बैठकर चारों वेदों के भाष्यकरण द्वारा नये युग का सूत्रपात करते हुए अयोध्या के जिस वैदिक स्वरूप की नींव डाली थी, और आज सन् २०२१ ई. में दूसरे योगी आदित्यनाथ ने वैदिक नगरी के उसी स्वरूप को भव्य, दिव्य, रम्य और सुरम्य रूप दिये जाने के अनुष्ठान द्वारा उसी संकल्प को मूर्तरूप देने का लक्ष्य निर्धारित किया है।

वेदभाष्य स्मारक निर्माण योजना में समर्पित आर्यनेता श्री आनन्द कुमार आर्य, टाण्डा (पूर्व कार्यकारी अध्यक्ष, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा) तथा वैज्ञानिक संन्यासी स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती (स्मृतिशेष) के शिष्य आचार्यवर पं.दीनानाथ शास्त्री से जनसामान्य की यह अपेक्षा करना स्वाभाविक है कि वे आगे बढ़कर योगी आदित्यनाथ जी तथा जगत्वंद्य स्वामी रामदेव जैसे योगियों से सम्पर्क स्थापित कर इस योजना को मूर्तरूप दें, जिससे वह दिन पुनः आये जब हम गर्व और गौरव के साथ कह सकें-

यद्यपि सब बैकुंठ समाना। वेद पुरान विदित जग जाना।।
अवध सरिस प्रिय मोहिं न सोऊ। यह प्रसंग जानइ कोई कोऊ।।

१६वीं शताब्दी में गोस्वामी तुलसी दास ने अयोध्या को स्वर्गोपम कहकर भगवान श्रीराम की भावनाओं को शब्द दिये हैं, १९वीं शताब्दी में योगी ऋषिराज दयानन्द सरस्वती ने सरयूबाग मे बैठकर वेदभाष्य का आर्षभाषा में प्रणयन किया है और २१वीं शताब्दी में योगी आदित्यनाथ ने अयोध्या को वैदिक नगरी का रूप प्रदान करने का निश्चय किया है। यदि योगी की परिकल्पना मूर्तरूप लेती है तो निश्चय ही वह दिन आयेगा जब अयोध्या में ब्रह्मवेत्ता वेदज्ञों के चरणों में बैठकर अखिल भुवन मानवता की शिक्षा ग्रहण करेगा-

'स्वं स्वं चरित्रंशिक्षेरन् पृथिव्यां सर्व मानवाः'-(मनु.)

सत्यार्थ प्रकाश वार्ता-२०७

युग प्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती के अमरग्रंथ 'सत्यार्थ प्रकाश' के धारावाहिक स्वाध्याय के क्रम में दशम समुल्लास का अंश

विदेश भ्रमण

(प्रश्न) आर्यावर्त्त देशवासियों का आर्यावर्त्त देश से भिन्न-भिन्न देशों में जाने से आचार नष्ट हो जाता है वा नहीं?

(उत्तर) यह बात मिथ्या है। क्योंकि जो बाहर भीतर की पवित्रता करनी, सत्यभाषणादि आचरण करना है वह जहाँ कहीं रहेगा आचार और धर्म भ्रष्ट नहीं होगा। और जो आर्य्यावर्त्त में रह कर भी दुष्टाचार करेगा वही धर्म और आचार भ्रष्ट कहावेगा। जो ऐसा ही होता तो-

मेरोर्हरेश्च द्वे वर्षे हैमवतं ततः।
क्रमेणैव व्यतिक्रम्य भारतं वर्ष
मासवत् ॥1॥ स देशान्विधान्पश्यंश्चीन
हूणनिषेवितान् ॥2॥

ये श्लोक भारत शान्तिपर्व मोक्षधर्म में व्यास शुक संवाद में हैं--अर्थात् एक समय व्यास जी अपने पुत्र शुक और शिष्य सहित पाताल अर्थात् जिसको इस समय 'अमेरिका' कहते हैं; उसमें निवास करते थे। शुकाचार्य्य ने पिता से एक प्रश्न पूछा कि आत्मविद्या इतनी ही है या अधिक? व्यास जी ने जानकर उस बात का प्रत्युत्तर न दिया क्योंकि उस बात का उपदेश कर चुके थे। दूसरे की साक्षी के लिये अपने पुत्र शुक से कहा कि हे पुत्र! तू मिथिलापुरी में जाकर यही प्रश्न जनक राजा के कर। वह इसका यथायोग्य उत्तर देगा। पिता का वचन सुन कर शुकाचार्य्य पाताल से मिथिलापुरी की ओर चले। प्रथम मेरु अर्थात् हिमालय से ईशान उत्तर और वायव्य देश में जो देश बसते हैं उनका नाम हरिवर्ष था। अर्थात्

हरि कहते हैं बन्दर को, उस देश के मनुष्य अब भी रक्तमुख अर्थात् वानर के समान भूरे नेत्र वाले होते हैं। जिन देशों का नाम इस समय 'यूरोप' है उन्हीं को संस्कृत में 'हरिवर्ष' कहते थे। उन देशों को देखते हुए और जिनको हूण 'यहूदी' भी कहते हैं उन देशों को देख कर चीन में आये। चीन से हिमालय और हिमालय से मिथिलापुरी को आये।

और श्रीकृष्ण तथा अर्जुन पाताल में अश्वतरी अर्थात् जिसको अग्नियान नौका कहते हैं; पर बैठ के पाताल में जाके महाराजा युधिष्ठिर के यज्ञ में उद्दालक ऋषि को ले आये थे। धृतराष्ट्र का विवाह गांधार जिसको 'कंधार' कहते हैं वहां की राजपुत्री से हुआ। माद्री पाण्डु की स्त्री 'ईरान' के राजा की कन्या थी। और अर्जुन का विवाह पाताल में जिसको 'अमेरिका' कहते हैं वहां के राजा की कन्या उलोपी के साथ हुआ था। जो देशदेशान्तर, द्वीप-द्वीपान्तर में न जाते होते तो ये सब बातें क्यों कर हो सकतीं? मनुस्मृति में जो समुद्र में जाने वाली नौका पर कर लेना लिखा है वह भी आर्य्यावर्त्त से द्वीपान्तर में जाने के कारण है। और जब महाराजा युधिष्ठिर ने राजसूय यज्ञ किया था उसमें सब भूगोल के राजाओं को बुलाने को निमन्त्रण देने के लिये भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव चारों दिशाओं में गये थे, जो दोष मानते होते तो कभी न जाते। सो प्रथम आर्य्यावर्त्तदेशीय लोग व्यापार, राजकार्य्य और भ्रमण के लिये सब भूगोल में घूमते थे। और जो आज कल छूतछात और धर्म भ्रष्ट होने की शंका है वह केवल मूर्खों के बहकाने और अज्ञान बढ़ने से है। (क्रमशः)

वेदांजलि

मेरे सत्कर्म जीवन को यज्ञमय बना दें

❑पं.शिव कुमार शास्त्री
भू.पू.संसद सदस्य

मह्यं यजन्तु मम यानि हव्याकूतिः सत्या मनसो मे अस्तु।
एनो मा नि गां कतमच्चनाहं विश्वे देवासो अधिवोचता नः।।

—ऋग्वेद 10/128/4

शब्दार्थ-

(मम) मेरे (यानि) जो (हव्या) संसार के व्यवहार को चलानेवाले सद्गुण हैं, वे (मह्यम्) मेरे लिए (यजन्तु) हितकारक हों (मे) मेरा (मनसः) मन का (आकूतिः) चिन्तन (सत्या) सत्य (अस्तु) होवे। (अहम्) मैं (कतमच्चन) किसी भी अवस्था में (एनः) पाप (मा नि गाम्) न करूं (विश्वेदेवासः) हे सब विवेकी विद्वानों ! (नः) हम लोगों को (अधिवोचत) उपदेश करो- अच्छाई और सचाई का प्रचार करो।

व्याख्या- इस ऋचा में चार बातें कही गई हैं- पहली यह कि मेरे सद्गुण मुझमें विकसित होकर मेरा कलयाण करें। दूसरी यह कि मेरे संकल्प सत्य हों। तीसरी यह कि मैं किसी भी अवस्था में पापाचरण न करूँ। चौथी यह कि विद्वानों का यह कर्तव्य है कि वे संसार को सन्मार्ग पर चलने का उपदेश करते रहें।

अब थोड़ा विस्तार से विचार कीजिये- संसार का कोई पतित-से-पतित मनुष्य भी ऐसा न मिलेगा, जिसमें सब दुर्गुण ही दुर्गुण हों, कोई भी सद्गुण न हो। इसी प्रकार ऐसे भी विरले ही महापुरुष होंगे, जिनमें अच्छाइयाँ ही हों, कोई दुर्गुण न हो। यदि कोई हैं तो वे देव कोटि के हैं, सामान्य नहीं; क्योंकि, शतपथ ब्राह्मण ने देवों और मनुष्यों के बीच सीमा रेखा खींचते हुए लिखा है- **"सत्यं वै देवाः, अनृतं मनुष्याः"** अर्थात् देवों का जीवन तपःपूत सत्यमय होता है। मनुष्य उस भव्य भवन पर चढ़ने के लिए यत्नवान् तो है, पर मनःस्थिति के अपरिपक्व होने से संसार के प्रलोभन उसे पथभ्रष्ट कर डालते हैं। उदाहरण के लिए हम सभी महाभारत के दो पात्रों- दुर्योधन और कर्ण को अच्छा नहीं समझते। ऋषि दयानन्द जी महाराज ने दुर्योधन को- 'गोत्र हत्यारा' शब्द से सम्बोधित किया है, किन्तु इसका यह अभिप्राय नहीं कि दुर्योधन और कर्ण में कोई सद्गुण न था। महाभारत में इनके चरित्र के अनुशीलन से विदित होता है कि इनके कुछ गुण बहुत ही असाधारण और मोहक थे। कर्ण की वीरता, सच्चरित्रता और दानशीलता अद्भुत थी। उसी वीरता और उदारता का वर्णन करते हुए व्यास ने लिखा है-

यस्य चेतसि निर्व्याजं द्वयं तूलकगायते।
क्रोधो विरोधिनां सैन्यं प्रसादे कनकोच्चयः।।

जिस कर्ण के चित्त मे दो वस्तुएँ एक समान रुई के रेशे की तरह उड़ती रहती हैं। क्या क्या? क्रोध आने पर शत्रुओं की सेना और प्रसन्न होने पर सोने के ढेर, अर्थात् कर्ण उच्चतम कोटि का वीर और दानी है।

अतः मंत्र में पहली प्रार्थना है कि मेरे सद्गुण मेरे जीवन में विकसितहोकर जीवन को यज्ञमय बना दें, ताकि मैं अपना और समाज का भला कर सकूँ।

मन्त्र की दूसरी बात है कि मेरे संकल्प सत्य हों। ऐसा न हो कि मैं व्यर्थ की उधेड़बुन में पड़ा रहूँ, अर्थात् मेरे चिन्तन की दिशा ठीक हो। जब मुझे ठीक विचार करने का अभ्यास होगा तो उसका आचरण भी ठीक ही करूँगा। यदि चिन्तन बेतुका होगा, तो उसके फल का ठीक ठीक होने का प्रश्न ही कहाँ उपस्थित होता है? महत्त्वाकांक्षाएँ तो मस्तिष्क में भले ही रहें, किन्तु अपनी योग्यता और क्षमताओं के अनुसार ही वे क्रियान्वित हो पाती हैं, अतः मनुष्य को संतुलित विचार का अभ्यस्त होना चाहिये, तभी मानसिक शान्ति भी रह सकती है।

मन्त्र की तीसरी बात है कि कोई दोष अनजाने मेरे जीवन में रह जाय, यह सम्भव है, पर जान लेने पर कि यह बुराई है- फिर चाहे कुछ हो जाय, मैं उसे सर्वस्व बाजी लगाकर भी समाप्त करके ही छोड़ूँगा। पाप को पाप जनते हुए आचरण करना जीते जी मरने समान है, अतः मेरी इच्छशक्ति इतनी प्रबल होनी चाहिए कि वीर के समान डटकर मैं उस पाप को जीवन में से निकाल फेंकूँ। मृत्यु स्वीकार हो, किन्तु पापमय जीवन नहीं।

अब मन्त्र की चौथी और अन्तिम बात आई कि- हे संसार के बुद्धिमान् व्यक्तियों! आप जानी हुई सचाई और अच्छाई का प्रचार करें। प्रचार के बिना वह अच्छाई केवल चाहने से नहीं फैलेगी। यह एक बहुत आवश्यक और विचारणीय विषय है।

मनुष्य एक विचारशील सामाजिक प्राणी है। उस पर अच्छे और बुरे संस्कारों का प्रभाव अवश्य पड़ता है, अतः संसार को सन्मार्ग पर लाने के लिए मनुष्य का पवित्र कर्त्तव्य है कि वह शुभ विचारों का सन्देश दूसरों को देता रहे। यदि इस आवश्यक कर्त्तव्य की उपेक्षा की जायेगी तो कपिल मुनि के शब्दों में- **'उपदेश्योपदेष्टृत्वात् तस्तिद्धिरन्यथान्ध परम्परा'** (सांख्यदर्शन)-अच्छे वक्ता व श्रोता शुभ कर्मों के मार्ग को प्रशस्त करे के लिए सद्विचारों के प्रचार में लगे रहते हैं तो संसार में धर्म की वृद्धि होती है, अन्यथा अज्ञान के अँधेरे में स्वार्थ-सिद्धि और भोग का वातावरण तैयार हो जाता है।

(श्रुति सौरभ से साभार)

दयानन्द चरितामृतम्

-डॉ.गणेश दत्त शर्मा-

(द्वितीयः सर्गः)

छन्द १-३

अथास्तिक्यमतिर्धीमान्
विचचार निरन्तरम्।
प्रतिजज्ञे दृढ़ं साक्षाद्,
द्रष्टुं त्रिशूलिनं तथा।।

आस्तिक मति वाले बुद्धिमान् (मूलशंकर) ने निरन्तर विचार किया और त्रिशूलधारी वास्तविक शिव का साक्षात् दर्शन करने की दृढ़ प्रतिज्ञा की।

कैलासे वा हिमाद्रौ वा,
ग्रामे ग्रामे वने वने।
अन्वेष्टव्यो महादेवः,
स्थाने च दुर्गमे मया।।

कैलास पर, हिमालय पर अथवा गाँव-गाँव में, प्रत्येक वन में या किसी दुर्गम स्थान पर, जहाँ भी हो, मुझे महादेव की खोज करनी है।

अर्धनारीश्वरं देवं,
लब्ध्वैव लोकनायकम्।
करिष्ये पूजनं तस्य,
कामयामास भावुकः।।

भावुक मूलशंकर ने यह कामना की कि, "मैं अर्धनारीश्वर तथा लोकनायक महादेव (शिव) को प्राप्त करके ही उसका पूजन करूँगा।"

('दयानन्द चरितामृतम्' से साभार, क्रमशः)

-साहिबाबाद, गाजियाबाद-२०१००५

सत्संग

जिज्ञासा और समाधान

जिज्ञासा :

"ईश्वरीय व्यवस्था के अनुसार मनुष्य की आयु पूर्व निर्धारित है, उसमें किसी तरह का परिवर्तन नहीं किया जा सकता है"- यह सिद्धान्त कहाँ तक मान्य है?

-आनन्द कुमार आर्य, प्रधान, आर्य समाज, टाण्डा, अम्बेडकरनगर, उ.प्र.

समाधान :

योगदर्शन के प्रसिद्ध सूत्र- 'जात्यायुर्भोगाः'-के आधार पर अधिकांश विद्वान् यह मानते हैं कि बच्चा तीन वस्तुएँ साथ लेकर जन्म लेता है- (1) जाति (2) आयु (3) भोग। अर्थात् बच्चे की आयु सुनिश्चित है। उसे जितने दिन संसार में रहना है- यह निर्धारित है। इसमें कोई कुछ भी न बढ़ा सकता है, न घटा सकताहै। निर्धारित समयावधि से पूर्व मनुष्य को कोई भी शक्ति मार नहीं सकती है और निर्धारित अवधि आने पर उसे कोई बचा भी नहीं सकता है। मनुष्य की भाग्यलिपि में यह अंकित रहता है। फलित ज्योतिष में इसी के अनुसार जन्म कुण्डली इत्यादि विधान बनाते रहते हैं।

किन्तु उपर्युक्त सिद्धान्त तर्क की कसौटी पर मान्य नहीं हो सकता है। मृत्यु की तिथि को घटाना बढ़ाना मनुष्य के हाथ में है। वह अपने पुरुषार्थ तप, त्याग, साधना द्वारा आयुर्बल की वृद्धि कर सकता है और आलसी दुराचारी होकर आयुर्बल को क्षीण भी कर सकता है। आयुर्बल की वृद्धि के पक्ष में एक सूक्ति इस प्रकार है

अभिवादन शीलस्य नित्यं वृद्धोऽपि सेविनः।
चत्वारि तस्य वर्द्धन्ते आयुर्विद्यायशोबलम्।।

सूक्ति में साफ साफ आयु की वृद्धि की बात कही गई है। योग साधनाएँ मनुष्य की आयु को बढ़ाने की बात कहती हैं। गोस्वामी तुलसीदास ने एक जगह पर कहा है- 'मेटत कठिन कुअंक भाल के' -भाग्य की लिपि की कालिमा को दूर किया जा सकता है- यदि सब कुछ पूर्व निर्धारित मान लिया जाय तो मनुष्य क्यों विद्यार्जन में समय बर्बाद करेगा? अतः मृत्यु या आयु पूर्व निर्धारित है- यह सिद्धान्त तर्क की कसौटी पर खरा नहीं उतरता है। महाभारत में भीष्म पितामह को हम मृत्युतिथि को बदलते हुए देखते हैं। श्री रामधारी सिंह 'दिनकर' का 'कुरुक्षेत्र' महाकाव्य में एक प्रसिद्ध छन्द इस प्रकार है

आई हुई मृत्यु से कहा अजेय भीष्म ने
कि योग नहीं जाने का अभी है इसे जानकर।
रुकी रहो, पास कहीं, यों कह लेट गये
बाणों का शयन बाण का ही उपधान कर।
व्यास कहते हैं- पड़े यों ही वे रहे विमुक्त
काल के करों से छीन मुष्टिगत प्राण कर।
और बाट जोहती विनीत कहीं आस पास
हाथ जोड खड़ी रही मृत्यु शास्ति मान कर।।

-सम्पादक

(पृष्ठ 1 का शेष...)

श्रीराम ने .....

स्नेहेनाक्रान्तहृदयः शोकेनाकुलितेन्द्रियः।
द्रष्टुमभ्यागतो ह्येष भरतो नान्यथागतः।।

-प्रिय लक्ष्मण! प्रेमविभोर हृदय से मेरे-तेरे वियोग में दुःखी भरत मुझे और तुझे मिलने आया है, किसी और विचार से नहीं।

विप्रियं कृतपूर्वन्ते भरतेन कदा नु किम्।
ईदृशं वा भयन्तेऽद्य भरतं यद्विशङ्कसे।।

-क्या पहले कभी भरत ने तुम्हें कोई कष्ट दिया है, जिसके कारण तुम डर रहे हो और उस पर शंका कर रहे हो?

यदि राज्यस्य हेतोस्त्वमिमां वाचं प्रभाषसे।
वक्ष्यामि भरतं दृष्ट्वा राज्यमस्मै प्रदीयताम्।।

-यदि राज्य के कारण तुम यह बात कह रहे हो तो भरत के मिलने पर मैं उसे कहूँगा कि यह राज्य लक्ष्मण को दे दो।

अध्यमानोहि भरतो मया लक्ष्मण तद्वचः।
राज्यमस्मै प्रयच्छेति वाक्तमित्येव मंस्यते।।

-हे लक्ष्मण! मेरे इस राज्य देने के प्रस्ताव पर भरत हाँ ही करेगा, ना नहीं।

राम के उद्गार कितने औदार्यपूर्ण और महान् हैं! राम ने इसी प्रकार के उदात्त विचार और आचार से अपने समय के समाज को अनुप्राणित किया था। यदि समय के प्रभाव से ही सबकुछ होता तो उसका प्रभाव लक्ष्मण पर क्यों नहीं है, जो भरत को मारने के लिए उद्यत हो गया? फिर बालि और सुग्रीव, विभीषण और रावण भी तो त्रेता में ही थे। त्रेता का जादू उन्हें क्यों नहीं प्रभावित कर रहा था? वस्तुतः बात वही है कि राम ने अपने पवित्र और उच्च आचरण से सभी विचारशील व्यक्तियों को सन्मार्ग की ओर प्रेरित किया था।

इतिहास में अनेक उदाहरण ऐसे हैं कि राजा ने अपने अन्तिम समय में उत्तराधिकारी पुत्र को छोटा देखकर राज्य का अधिकार अपने भाई को देते हुए कहा कि इसके समर्थ और योग्य होने पर इसको राजा बना देना। यदि इसमें यह क्षमता न हो तो फिर शासन सूत्र अपने हाथ में ही रखना। इस संसार से विदा लेनेवाले भाई के प्रस्ताव को भाई ने रोकर स्वीकार किया, किन्तु राज्य पाने के बाद जब चस्का लगा तो असली उत्तराधिकारी को समाप्त करके भी शासन को अपने अधिकार में रखने की बात मन में आई। इस प्रकार के दो नाम मुंज और वनवीर के तो बहुत ही प्रसिद्ध हैं। मुंज को भोज के पिता ने और वनवीर को उदयसिंह के पिता महाराणा साँगा ने राजा बनाया था। फिर क्या कारण था कि १४ वर्ष तक अयोध्या पर शासन करके भी भरत के मन में कोई विकार नहीं आया?

भरत को नन्दिग्राम में जब राम के वन से वापस आने का समाचार दिया गया तो भरत पुलकित हो उठे और कहने लगे-

अद्य जन्म कृतार्थं मे संवृत्तश्च मनोरथः।
यत्त्वां पश्यामि राजानमयोध्यां पुनरागतम्।।

-आज मेरा जीवन सफल हो गया। मेरी सब मनौतियाँ पूरी हो गईं कि आज अयोध्या के अधिपति को, आपको आया हुआ देख रहा हूँ।

पादुके ते तु रामस्य गृहीत्वा भरतः स्वयम्।
चरणाभ्यां नरेन्द्रस्य योजयामास धर्मवित्।।

-भरत ने सिंहासन पर रखी राम की खड़ाऊँ स्वयं अपने हाथ से उठाकर राम के चरणों में पहनाकर अयोध्या के साम्राज्य की ओर संकेत करके कहा-

एतत्ते सकलं राजन्यासन्निवर्तितं मया।

-हे भाई! तुम्हारा यह सारा राज्य मैंने धरोहर के रूप में सुरक्षित रक्खा है, अब इसे आप सम्भालिये।

इन उद्धरणों से स्पष्ट है कि राम के समय का समाज राम, भरत तथा इसी प्रकार के उदात्तचरित विचारशील व्यक्तियों ने बनाया था। वह समय के प्रभाव से स्वतः नहीं बन गया था।

स्मृति-विशेष

विलक्षण प्रतिभा के धनी

स्वामी सत्यपति परिव्राजक

-सेवकराम आर्य, लखनऊ

आपका जन्म हरियाणा राज्य के रोहतक जिले के फरमाना (महम) ग्राम में सन् १९२७ में हुआ। आपकी माता का नाम दाखां तथा पिताजी का नाम मोलड़ था। इस्लाम मतावलम्बी परिवार में कृषि तथा कपड़े धोने का कार्य होता था, स्वयं की खेती नहीं थी। आप विद्याध्ययन हेतु एक दिन भी विद्यालय नहीं गये। यह समय मुख्यतः खेती व पशु चराने में व्यतीत हुआ। लगभग १६ वर्ष की आयु में अनेक लोगों से अक्षरों को सीखकर, भूमि पर लिखकर, अक्षरों को मिलाकर शब्दों का अभ्यास किया। सन् १९४७ के भारत विभाजन के समय हुए हिंसक मारकाट से विवेक, वैराग्य, समाधि की प्राप्ति हुई, उसमें लगभग छः मास का समय लगा। नित्य, अनित्य का वास्तविक ज्ञान तथा मन, वचन, कर्म से ईश्वर को ही सर्वस्व का स्वामी मानना और सर्वप्रिय मानकर उपासना करना एवं 'परमात्मा' नाम का जप करना, ये आपके समाधि प्राप्त के मुख्य उपाय थे। इन दिनों आप प्रायः मौन रहते थे, बहुत आवश्यक होने पर अल्प मात्रा में बात करते थे, प्रायः इस अवस्था में लोग आपको पागल समझते थे। विवेक, वैराग्य की प्राप्ति के लगभग डेढ़ वर्ष के बाद आपको 'सत्यार्थ प्रकाश' पुस्तक मिली। भाषा का अल्प ज्ञान होने से जो बात समझ में नहीं आती थी उसे दूसरों से समझ लेते थे, उसमें लिखी बातें आपको सत्य ही प्रतीत होती थीं। ईश्वरोपासना से प्राप्त आनन्द को दूसरों तक पहुँचाने में भाषा का अल्पज्ञान बाधक लगने पर अनेक गुरुकुलों में जाकर देखा कि वहाँ क्या क्या कार्यक्रम होते हैं। श्री सुखदेव जी शास्त्री आपके गाँव में अध्यापक थे, उन्होंने आपका पूर्व नाम 'मुंशी' को हटाकर 'मनुदेव' रख दिया तथा वैदिक धर्म एवं संस्कृत भाषा का ज्ञान कराया, अष्टाध्यायी के कुछ सूत्र भी पढ़ाए, गुरुकुल झज्जर भेजने हेतु सहायता की। गाँव में आपकी गाने बजाने वालों की मण्डली थी, जिसमें आप बांसुरी बजाया करते थे, वैराग्य प्राप्त होने पर उसे छोड़ दिया तथा गांव भी छोड़ दिया। आप दयानन्द मठ, रोहतक विद्याध्ययन हेतु गये। अष्टाध्यायी आदि पढ़कर विद्वान बनकर संसार का उपकार करने की जो आपकी तीव्र इच्छा थी वह अभी पूर्ण नहीं हुयी। एकबार गुरुकुल गौतमनगर गये। वहाँ स्वामी सच्चिदानन्द जी ने आपका छात्राध्यक्ष के रूप में रहने की अनुमति दी। इस बात को जब आपने श्री सुखदेव शास्त्री जी को बताया तो उन्होंने गुरुकुल झज्जर को उत्तम स्थान बताया। तब आप गुरुकुल झज्जर चले गये। उस समय स्वामी ओमानन्द जी (पूर्व नाम आचार्य भगवान देव जी) गुरुकुल के आचार्य थे, उन्होंने आपको गुरुकुल में प्रविष्ट कर लिया, तब आपकी आयु २२ वर्ष थी। वहां आप लगभग १२ वर्ष तक पढ़े पढ़ाए तथा व्याकरणाचार्य, दर्शनाचार्य, वेद वाचस्पति आदि उपाधियां प्राप्त कीं। इसके बाद आपने अजमेर में आकर पं.युधिष्ठिर मीमांसक जी से मीमांसा दर्शन 'शाबर भाष्य' पढ़ा। तत्पश्चात् दिल्ली में स्वामी समर्पणानन्द जी से शतपथ ब्राह्मण का कुछ भाग पढकर गुरुकुल सिंहपुरा, रोहतक में लगभग १३ वर्ष रहे। यहीं पर आपने स्वामी ब्रह्ममुनि परिव्राजक से ७ अप्रैल १९७० को संन्यास दीक्षा ली तथा पूर्व नाम 'मनुदेव' के स्थान पर 'सत्यपति' नाम रखा गया। इसके उपरान्त गुरुकुल सिंहपुरा से दिल्ली आकर वहां केन्द्र बनाकर देश के विभिन्न स्थानों में वैदिक धर्म का प्रचार तथा योग प्रशिक्षण शिविरों को लगाते रहे। इसी काल में तपोवन, देहरादून में अनेक ग्रीष्मकालीन योगशिविर लगाए तथा दर्शनों, उपनिषदों का अध्यापन किया। स्वामी जी १० अप्रैल, १९८६ से आर्यवन विकास फार्म ट्रस्ट, रोजड़ में दर्शनों का अध्यापन एवं योग प्रशिक्षण आदि कर रहे थे। आपने योग मीमांसा, सरल योग से ईश्वर का साक्षात्कार, योगार्थ प्रकाश आदि पुस्तकें लिखीं। आपने दार्शनिक विद्वानों के निर्माण तथा विवेक वैराग्य प्राप्त ब्रह्मचारियों के लिए दर्शन योग महाविद्यालय, विश्व कल्याण न्यास, आर्ष गुरुकुल सुन्दरपुर जैसे आदर्श संस्थानों की स्थापना की। सेवा, साधना, स्वाध्याय हेतु प्रौढ़ सज्जनों के लिए वानप्रस्थ साधक आश्रम की स्थापना की। आपने धर्म प्रचार हेतु आष्ट्रेलिया तथा मॉरीशस की यात्राएं कीं। आर्यवन, रोजड़ में सन् १९९९ में देश विदेश के आर्य सज्जनों द्वारा ५१ लाख रुपये से अधिक की धनराशि से आपका सम्मान किया गया। इस सम्पूर्ण धनराशि को आपने वानप्रस्थ साधक आश्रम को समर्पित कर दिया। लगभग १२ एकड़ भूमि में वानप्रस्थ साधक आश्रम का निर्माण हो चुका है।

पूज्य स्वामी जी के प्रथम दर्शन का सौभाग्य मुझे गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के शताब्दी समारोह के अवसर पर वर्ष २००१ में प्राप्त हुआ। दूसरी बार वर्ष २००५ में अजमेर के योग शिविर के समय स्वामी जी का सान्निध्य प्राप्त हुआ। तीसरी बार फरवरी २००७ में मैं स्वामी वीरेन्द्र सरस्वती जी के साथ गुजरात यात्रा पर गया था। राजकोट में स्वामी जी को सहकार भारती, उ.प्र. के अध्यक्ष के रूप में अखिल भारतीय कार्यकारिणी की बैठक में भाग लेना था। दिनांक ०२.०२.२००७ को हमलोग पूज्य स्वामी सत्यपति जी के दर्शनार्थ रोजड़ गये। उस समय स्वामी जी अस्वस्थ चल रहे थे, किन्तु अस्वस्थता की स्थिति में उन्होंने ब्रह्मचारी को निर्देश दिया कि इन्हें साहित्य उपलब्ध करायें।

पूज्य स्वामी सत्यपति जी ४ फरवरी २०२१ को प्रातः ७.४५बजे इस नश्वर शरीर को छोड़कर परम पिता परमात्मा की गोद में चले गये।

-त्रिवेणी नगर, लखनऊ

अक्षर लोक

कौन कहता है द्रौपदी के पांच पति थे? (शोध)
शोधकर्त्ता : अमर स्वामी सरस्वती
प्रस्तुति : पेपर बैक/पृष्ठ संख्या १००
मूल्य : आठ रुपये(आठवां संस्करण १९९३)
प्रकाशक : सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा
महर्षि दयानन्द भवन,
रामलीला मैदान, नई दिल्ली—२

'कौन कहता है कि द्रौपदी के पांच पति थे?' प्रस्तुत पुस्तक में सारे 'महाभारत' को छान कर यह विचार किया गया है कि क्या वास्तव में द्रौपदी के पांच पति थे?

अमर स्वामी सरस्वती जी 'प्रस्तावना' में लिखते हैं कि वेदादि सत्य शास्त्रों में सर्वत्र एक पति की एक पत्नी और एक पत्नी का एक पति हो, ऐसा ही विधान है। पुरुषों ने कभी-कभी इस विधान के विपरीत एक से अधिक पत्नियां बनाई हैं, पर एक स्त्री के अनेक पति हों, ऐसी प्रथा प्राचीन काल में कभी नहीं चली। कौरवों और पांडवों के वंश में भी यह प्रथा कभी नहीं चली। इस पुस्तक में अनेक बातों पर प्रबल युक्ति संगत प्रमाणों के साथ विचार किया गया है कि--(१) द्रौपदी को क्या बिना विवाह के ही महाराज द्रुपद ने पाण्डवों के साथ भेज दिया होगा। जबकि द्रुपद को यह भी पता नहीं था कि ये लोग कौन हैं! (२) क्या कुन्ती ने ऐसा कहा होगा कि तुम पांचों उसे खा लो। (३) क्या भूल, भ्रम और अज्ञान में माता के मुँह से जो भी वाक्य निकल जाये, चाहे वह अनुचित ही हो, उसका पूरा करना पुत्रों का कर्त्तव्य है? (४) क्या पाण्डवों ने कुन्ती के वाक्य को उसी अर्थ में पूरा किया- जिस अर्थ में कुन्ती के मुख से निकला था? आदि आदि।

सारी बातों पर गम्भीरता पूर्वक विचार के पश्चात् इस पुस्तक में यह पुष्ट प्रमाणों द्वारा यह सिद्ध किया गया है कि द्रौपदी का पति एक ही था और वह अर्जुन नहीं, युधिष्ठिर था।

विदेशी विद्वानों का संस्कृत प्रेम
लेखक : जगदीश प्रसाद बरनवाल 'कुन्द'
प्रस्तुति : हार्ड बाउण्ड/पृष्ठ सख्या: २५६
मूल्य : रु. ५०० $18 और £10
प्रकाशक : मेधा बुक्स, एक्स—११,
नवीन शाहदरा,
दिल्ली—११० ०३२

'विदेशी विद्वानों का संस्कृत प्रेम' ग्रन्थ में भारतीयेतर संस्कृत विद्वानों पर, जिनके श्रमसाध्य प्रयासों से संस्कृत भाषा एवं साहित्य की वैश्विक पहचान बनी, लेखक 'कुन्द' के २५ सार्थक लेख जन्मतिथि क्रम से संग्रहीत हैं। अन्य लगभग चार सौ विद्वानों पर, जिनके बारे में उन्हें अपेक्षाकृत कम जानकारी मिल सकी, अकार क्रम से महत्त्वपूर्ण टिप्पणियाँ दी गयी हैं। विदेशी संस्कृत विद्वान जिन पर सम्पूर्ण लेख प्रस्तुत किए गये हैं वे हैं- अलबरूनी, सर विलियम जोंस, गेरासिम लेबेदेव, चार्ल्स विलकिंस, हेनरी थामस कोलब्रुक, होरेस होमन विल्सन, रॉबर्ट लेन्ज, जेम्स रॉबर्ट बैलेंटाइन, पेत्रोव, बोटालिंग, काएतान कोसोविच, मोनियर विलियम्स, थ्योडोर गोल्डस्डकर, मैक्समूलर, जे.जी.बूलर, इवान मिनायेव, कीलहार्न, पाल डायसन, आर्थर वेनिस, हर्मन जी जैकोबी, डॉ. बी.जी.थीबो, ए.ए.मैकडानल, एस.ओल्डेनबर्ग, एम.विण्टरनित्ज, फ्योदोर श्चेर्बात्स्की, ए.बी.कीथ एवं ए.एल.वाशय।

पुस्तक के अन्त में अन्य संस्कृत विद्वानों के योगदान पर एक विहंगम दृष्टि भी डाली गयी है और सत्ताइस संस्कृत विद्वानों के श्वेत-श्याम चित्र भी प्रकाशित किये गये हैं।

सर गंगानाथ झा, केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ, प्रयाग के प्रोफेसर (से.नि.) महामहोपाध्याय पं.शिव कुमार मिश्र के शब्दों में, 'संस्कृत के अधिकृत अध्ययन से जुड़े न रहकर भी 'कुन्द' जी द्वारा व्यक्तिगत प्रयास से किया गया यह कार्य निस्सन्देह उन्हें अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर एक स्थान बनायेगा।

ऋतम्भरा (दोहा—संग्रह)
दोहाकार : दयानन्द जड़िया 'अबोध'
प्रस्तुति : पेपर बैक/पृष्ठ संख्या १००
मूल्य : एक सौ पचास रुपये
प्रकाशक : त्रिमूर्ति प्रकाशन
लखनऊ

'ऋतम्भरा' वरिष्ठ कवि दयानन्द जड़िया 'अबोध' के दोहों का संग्रह है। छान्दसिक कविता को समर्पित 'अबोध' जी की यह छियालीसवीं कृति है।

'ऋतम्भरा' में 'निवेदन-निकुंज', 'प्रकृति प्रभा', 'सत्य-सिन्धु', 'शृंगार-सदन', 'रंग-तरंग', 'नीति-निर्झरणी', 'साहित्य-सरोवर', 'विविधांचल', 'अवधी दोहोद्यान' और 'अवधी दोहे' शीर्षकों के अन्तर्गत संयोजित 'अबोध' जी के 'सुबोध' ४५५ दोहे प्रकाशित किये गये हैं। 'परिशिष्ट' में 'अबोध' जी के ग्रन्थों पर अनेक कवियों की स्नेहसिक्त काव्यात्मक टिप्पणियां और 'रचनाकार का परिचय' (शिखा जड़िया 'रजनी' के शब्दों में) दृष्टव्य हैं।

वर्तमान समय में वृद्धावस्था एवं रोगग्रस्तता में भी 'अबोध' जी साहित्य साधना में रत हैं। वह सचमुच बधाई के पात्र हैं।

हरदोई-समाचार

सामवेद पारायण यज्ञ का सफल आयोजन

आर्य समाज सण्डीला जिला हरदोई के तत्वावधान में बेहटा रोड, निर्मला नर्सिंग होम के सामने मैदान में दिनांक २ से ७ मार्च तक बृहद् सामवेद पारायण यज्ञ वैदिक विद्वान श्री विश्वमित्र वेदार्थी के आचार्यत्व में सम्पन्न हुआ। यज्ञ को सफल बनाने में गुरुकुल के आचार्य श्री दातादेव तथा आर्य समाज हरदोई के प्रतिनिधियों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

हरदोई क्षेत्र की जनता ने यज्ञ में श्रद्धा और उत्साह के साथ भाग लिया। पार्श्ववर्ती जनपदों के भी गण्यमान आर्य जन यज्ञ के साक्षी बने। लखनऊ का प्रतिनिधित्व श्री ए.के.सिंह, आर्य समाज सदर तथा अनिल आहूजा ने किया। यज्ञ को सफल बनाने में आर्य समाज सण्डीला के जाने माने समाजसेवी आर्यनेता डॉ. सत्य प्रकाश का सराहनीय योगदान रहा।

क्रूर कोरोना ने छीना ओमप्रकाश द्विवेदी को

कछोना, जिला हरदोई के प्रतिष्ठित द्विवेदी परिवार के प्रमुख सदस्य 'बापू' उपनाम से प्रसिद्ध स्व.श्रीनिवास द्विवेदी के सुपुत्र श्री ओम प्रकाश द्विवेदी को भी क्रूर कोरोना छीनने में सफल रहा। श्री ओम प्रकाश द्विवेदी स्व.बापू के चार पुत्रों में से द्वितीय थे तथा रेलवे विभाग में सकुशल सेवा पूर्ण करने के पश्चात् सेवानिवृत्त हो चुके थे। अपने तिलक नगर के पैतृक आवास को छोड़कर उन्होंने कछोना के उत्तरी पार्श्व में अपना मकान बनवा लिया था, जहाँ वे अपनी धर्मपत्नी श्रीमती ऊर्मिला देवी पुत्र आदित्य हरिओम पुत्री जगदात्री एवं बच्चों के साथ रहते थे। श्री ओम प्रकाश व्यवहार कुशल, विनम्र तथा परोपकारी वृत्ति के व्यक्ति थे तथा कछोना में काफी लोकप्रिय थे।

अपनी मृत्यु से कई महीने पूर्व वे अपनी प्रिय बड़ी बहन सरला आर्य (यमुना देवी) से लखनऊ शिवविहार कालोनी आकर मिल गये थे। ओम प्रकाश जी के निधन से द्विवेदी परिवार तथा कछोना वासियों को गहरा आघात पहुँचा है। परमपिता परमात्मा से प्रार्थना है कि वह उनकी आत्माको शान्ति एवं सद्गति प्रदान करे तथा शोकसंतप्त पारिवारिक जनों को धैर्य और शक्ति दे।

लखनऊ-समाचार

श्री चन्द्रिका दास दिवंगत

आर्य समाज इन्दिरा नगर लखनऊ के वरिष्ठ सदस्य श्री चन्द्रिका दास का कोरोना महामारी से निधन हो गया। आप एच.ए.एल. लखनऊ के चीफ मैनेजर के पद से सेवानिवृत्त हुए थे तथा पिछले कुछ समय से अपने सुपुत्र के साथ फैजाबाद में रह रहे थे। आपके निधन के समाचार से आर्य समाज इन्दिरा नगर के आर्यजनों में शोक की लहर दौड़ गई। आपकी आत्मा की शान्ति एवं सद्गति के लिए तथा दुःख में डूबे परिवार को इस दुःख को सहन करने की शक्ति प्रदान करने के लिए ईश्वर से प्रार्थना की गई। *(डोरीलाल आर्य)*

सांध्य - सूरज

❑ जयप्रकाश शुक्ल

छंद के बंधनों को तोड़कर बह चली भावधारा

मेरे जितने भी भाँजे हैं– सभी में श्री जयप्रकाश शुक्ल ज्येष्ठ हैं। यद्यपि स्वयं अस्वस्थ हैं तथापि अपनी प्रिय मामी श्रीमती सरला जी के निधन के समाचार ने उन्हें विह्वल बना दिया– क्योंकि उनके प्रारंभिक जीवन के कई वर्ष मामीजी के सान्निध्य में व्यतीत हुए थे– उनकी हृदयस्पर्शी भावधारा का अविरल प्रवाह निम्नांकित कविता में देखते ही बनता है। —डॉ.वेद प्रकाश आर्य

जब पीड़ा से मन ग्रस्त हुआ, तब चिन्ता से मन त्रस्त हुआ,
जब निर्बलता से तन पस्त हुआ, तब संध्या का सूरज अस्त हुआ।
मामी को मेरा प्रणाम, उनकी आत्मा को शांति मिले,
परिजन सारे दुःख में डूबे, उनको भी धीरज विश्रांति मिले।

मामा मामा दो शब्द एक, दोनो का है एक रूप,
मामा मामी की छाया थे, अब आ गयी है कड़ी धूप।
मैं आ न सका ना तो मिल पाया, सुन पायी नहीं मधुर बोली,
क्या मालूम था होली के पहले ही, सज जायेगी उनकी डोली।

जब संध्या का सूरज ढ़लता है, तभी अन्धेरा घिरता है,
और उस घने अंधेरे में, किसको कौन ढूँढता है।
यादों की परिकल्पना में, चित्र बहुत खिंचे हुए हैं,
कुछ उड़े पड़े कुछ गिरे, कुछ नीचे मैले होकर जले हुए हैं।

वो बालकाल का यौवन था, बीती कितनी सुख की घड़ियाँ,
मुझको मामी की याद आ गयी, लिख डाली हमने दो कड़ियाँ।
वो लोच लचकती मोहक गति, मन को बहुत लुभाती थी,
वो हँसी खिलखिलाहट होठों की, मन में मुस्कान जगाती थी।

छोटी ननद और भौजाई में, सबसे बड़ी मधुरता थी,
रहती थी पास सदा उनके, आपस में बड़ी सहजता थी।
कद काठी की लम्बाई थी, हँसकर ही बातें करती थी,
आँखों में आकर्षण था, वो सबका मन हर लेती थी।

भार उठाये कंधे पर, पीड़ा को बहुत सहा तुमने,
शायद कोई ऋण बाकी था, वो सारा ऋण चुका दिया तुमने।
वो जाकर के ही आयी थी, और जाकर के ही फिर आयेगी,
वो जन्मेगी फिर इस दुनिया में, फिर आकर के मुस्काएगी।

वो आर्यलोक के संपादक की, प्यारी प्रियतम भार्या थी,
वो वार्ता की सह संपादक, वो सचमुच सरला आर्या थी।
जीवन की गति के रथ पर बैठे, हम कितनी दूर चले आए,
जब पीछे मुड़कर देखा, कोई नजर नहीं आए।

यह आशाओं का जीवन है, आशा में प्यासा रह जाए,
आखिर में तो चलना ही है, शायद हम प्यास बुझा पाए।
स्वारथ के रिश्ते नाते, बस एक जरूरत होती है,
मिट्टी की काया से लिपट लिपट, सारी दुनिया रोती है।

यद्यपि स्वारथ की दुनिया, पर अपना धर्म निभाना है,
जीवन साथी के हर सुखदुख में, अपना कर्तव्य निभाना है।
मामा को करता प्रणाम, समयासुर की गति न्यारी है,
मन चिन्ता से दूर रहे, यह शुभकामना हमारी है।।

-आशियाना, कानपुर रोड, लखनऊ

सूचना एवं निवेदन

(१) स्व.मीना आर्य (धर्मपत्नी कर्मयोगी आनन्द कुमार आर्य) टाण्डा अम्बेडकर नगर को श्रद्धांजलि आगामी अंक में अवश्य पढ़ें।

(२) विषम परिस्थितियों को देखते हुए अपनी सहयोग राशि स्वाध्याय के प्रतिनिधि पत्र 'आर्य्य लोक वार्ता' को अविलम्ब भेजकर पुण्य लाभ प्राप्त करें।

(३) अपनी सहयोग राशि कृपया पृष्ठ ७ पर अंकित निर्देशों के अनुसार बैंक ऑफ बड़ौदा की किसी भी शाखा में 'आर्य लोक वार्ता' के नाम जमापर्ची भरकर जमा कर दें तथा इसकी सूचना से हमें अवगत करायें। -सम्पादक

धारावाहिक-17 कालजयी रचना

आर्य-संस्कृति के मूल तत्त्व

-डॉ. सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार-

कोई कहता है, मन्दिर में जाओ, मस्जिद में जाओ, गिर्जे में जाओ, यहाँ डुबकी लगाओ, वहाँ गोता लगाओ, इसमें यकीन लाओ, उसको दान दो--इस उपाय से, उस उपाय से कर्म अपना फल नहीं देगा, परन्तु ये सब मनुष्य के मन की कमजोरी है, ये सब समस्या का हल करने के नहीं, समस्या से बचने के प्रयत्न हैं।

भाग्य अथा पुरुषार्थ--एक समस्या--

तो फिर वही प्रश्न जहां-का-तहां उठ खड़ा होता है। क्या हम प्रारब्ध से, दैव से, भाग्य से, पिछले कर्मों से इस प्रकार जकड़े हुए हैं कि इनकी 'अवश्यंभाविता' और इनके 'चक्र' में से निकल ही नहीं सकते, जो होना है वह होना ही है, मस्तक में जो रेखा खिंच गई वह अमिट है-'भवितव्यता बलीयसी'-या जीवन में पुरुषार्थ को, स्वतन्त्रता को भी कोई स्थान है, हम नया कुछ भी कर सकते हैं? आर्य-संस्कृति ने विश्व में कार्य-कारण के व्यापक भौतिक नियम को देखकर उसी को आध्यात्मिक जगत् में कर्म के सिद्धान्त का नाम दिया, कर्म के सिद्धान्त को मानने से उसके लिये पूर्वजन्म तथा पुनर्जन्म को मानना आवश्यक हो गया, परन्तु इनके मानने से उसके सामने एक महान् समस्या उठ खड़ी हुई। आत्मा को आर्य-संस्कृति कर्ता मानती है, कर्म नहीं; भोक्ता मानती है, भोग्य नहीं; स्वतन्त्र मानती है, परतन्त्र नहीं--फिर कर्म के सिद्धान्त के साथ जिसमें आत्म-तत्त्व परतंत्र हो जाता है यह आत्म-तत्त्व की स्वतंत्रता की संगति कैसे करे?

भाग्य तथा पुरुषार्थ, आत्म-तत्त्व का कर्मों के बन्धन के साथ बंधा होना तथा स्वतन्त्ररूप से कार्य कर सकना- -इन दोनों बातों की संगति समझने के लिये 'कर्म' को कुछ और गहराई से समझने की जरूरत है।

संचित, प्रारब्ध तथा क्रियमाण कर्म--

'कर्म' तीन तरह का माना गया है-'संचित', 'प्रारब्ध' तथा 'क्रियमाण'। पिछले जन्मों से लेकर अबतक का जितना कर्म है वह 'संचित' कहलाता है। 'संचित' कर्मों में से किन्हीं का फल मिल चुका है, वे अब 'संचित' नहीं रहे, कुछ का मिलने लग रहा है, कुछ का अभी मिलना बाकी है। जिनका फल मिल चुका, या जिनका मिलने लग रहा है, उन्हें 'प्रारब्ध' कहते हैं। 'प्रारब्ध' इसलिये क्योंकि उनका फल मिलना 'प्रारंभ' हो गया है। 'प्रारंभ' से 'प्रारब्ध'। जिन कर्मों का अभी फल मिलना बाकी रह गया वे 'संचित' की श्रेणी में ही हैं। 'संचित' और 'प्रारब्ध'-कर्मों में इतना ही भेद है कि 'संचित' कर्मों का जब फल मिल जाय, या मिलना प्रारंभ हो जाय, तब 'संचित' कर्म ही फल के प्रारंभ हो जाने के कारण 'प्रारब्ध' कहाता है। असल में 'संचित' और 'प्रारब्ध' दोनों का भूत के कर्मों के साथ सम्बन्ध है। वर्तमान में जो कर्म हम कर रहे हैं वे 'क्रियमाण' कहाते हैं, परन्तु 'क्रियमाण'-कर्म ही झट-से 'संचित' की श्रेणी में चले जाते हैं। इस जन्म से उठकर अगर हम पिछले जन्म में चले जायं, तो इस जन्म के जो 'संचित'-कर्म हैं, वे उस जन्म के 'क्रियमाण'-कर्म थे, और अगर हम इस जन्म से अगले, आने वाले जन्म की दृष्टि से देखें, तो इस जन्म के जो 'क्रियमाण'-कर्म हैं वे अगले जन्म के 'संचित'-कर्म होंगे। असली कर्म, 'संचित' और 'क्रियमाण'-कर्म हैं। 'प्रारब्ध' तो 'संचित' और 'क्रियमाण'-कर्म--'क्रियमाण'-कर्म जब 'संचित' बन जाते हैं--इनके फल के प्रारंभ हो जाने का नाम है। इसीलिये जब कोई अच्छा या बुरा फल दीखने लगता है, कर्म का अच्छा या बुरा फल प्रारंभ हो जाता है, तब हम कहते हैं--'प्रारब्ध में ऐसा लिखा था'। बिना फल प्रारंभ हुए कैसे कहें--'प्रारब्ध में ऐसा था'। एक आदमी को बैठे-बैठे सांप आकर डस गया। जब तक नहीं डसा तब तक हम नहीं कहते कि 'प्रारब्ध' ऐसी थी, जब डस गया तब कहते है। कि 'प्रारब्ध' में ऐसा लिखा था। तब इसलिये कहते हैं क्योंकि उस समय फल मिलना प्रारंभ जो गया दीखने लगता है।

क्या क्रियमाण-कर्म इस जन्म में स्वतंत्र रूप से हो सकता है?--

'कर्म'-सिद्धान्त की वास्तविक समस्या 'क्रियमाण'-कर्म की है। जो कर्म हम इस समय करने लगे हैं वह बिल्कुल नया, स्वतंत्र-कर्म है, या यह किसी पिछले कर्म का फल है, यह किसी कारण का कार्य है, या एक नया कारण है जो किसी अगले कार्य को उत्पन्न करने वाला है? इसी प्रश्न के हल में 'भाग्य' या 'पुरुषार्थ' की समस्या का हल छिपा है।

इस प्रश्न के दो उत्तर तो स्पष्ट हैं। एक तो यह कि 'क्रियमाण'-कर्म कोई स्वतन्त्र कर्म नहीं है, कार्य-कारण की अनन्त-काल से चली आ रही लड़ी की यह एक कड़ी है, दीखने को यह एक स्वतन्त्र कर्म दीखता है, परन्तु वास्तव में पिछले कर्मों का यह फल है, यह ऐसा ही होना है, इससे भिन्न नहीं हो सकता। जो विचारक कर्म के सिद्धान्त को कार्य-कारण का सिद्धान्त ही मानते हैं वे इसके अतिरिक्त दूसरी बात कैसे कह सकते हैं? इसीलिये कर्म का सिद्धान्त मानने वाले प्रायः 'भाग्यवादी' (Fatalists) हो जाते हैं, जो-कुछ हो रहा है उसे अमिट, अवश्यंभावी मानते हैं, उसमें परिवर्तन नहीं हो सकता--ऐसा मानते हैं। इस प्रश्न का दूसरा उत्तर यह है कि 'क्रियमाण'-कर्म एक स्वतन्त्र कर्म है, हम जो चाहें कर सकते हैं, किसी पिछले बन्धन से हम बंधे नहीं। यह सिद्धान्त 'पुरुषार्थवादियों' (Free-willists) का है, परन्तु इस सिद्धान्त को मानने से कार्य-कारण के नियम को छोड़ना पड़ता है। इन दो उत्तरों के अतिरिक्त इस प्रश्न का एक तीसरा उत्तर भी है--यह उत्तर 'आर्य-संस्कृति' का है।

कार्य-कारण तथा कर्म के सिद्धान्त में भेद--

तीसरा उत्तर यह है कि कार्य-कारण के नियम और कर्म के सिद्धान्त में जहां समानता है वहां उस समानता के साथ एक भिन्नता भी है। कार्य-कारण का नियम भौतिक-जगत् का नियम है, आग-पानी-हवा का नियम है, कर्म का नियम आध्यात्मिक-जगत का नियम है, उस जगत् का नियम है जहां 'चेतना' नाम की पंच-तत्त्वों से भिन्न सत्ता काम करने लगती है। भौतिक-जगत् स्वतंत्र जगत् नहीं है, दूसरे के अधीन है। यह दूसरा कौन है?

('आर्य संस्कृति के मूलतत्व' ग्रंथ से साभार क्रमशः)

व्याख्यान माला-9

शंकर और दयानन्द

-महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती-

जो लोग ब्रह्म को ढूंढना चाहते हैं, उनके लिए आवश्यक है कि वे अपने अन्दर श्रद्धा उत्पन्न करें। ऐसे लोगों के लिए वेद कहता है, 'उठो, जागो, और पहुँचो उनके पास जो जागे हुए हैं।' जागो इसलिए कहा कि संसार में कपट बहुत है। गुरु को ढूंढना हो तो पूर्ण बुद्धिमत्ता से कार्य लेना चाहिये। उसकी अच्छी प्रकार जाँच करनी चाहिए। परन्तु जब एक बार जाँच कर ली, जब एक बार बात समझ में आ गई, तो उस पर श्रद्धा करनी चाहिये। आज के संसार में अद्भुत खेल हो रहा है। या तो ऐसी श्रद्धा है जिसमें बुद्धि नहीं या फिर ऐसी बुद्धि है जिसमें श्रद्धा नहीं है। हर समय पहचान होती रहती है, निर्णय नहीं होता। ये दोनों विधियाँ अशुद्ध हैं। श्रद्धा से पहले पूरे होश से जाँच करनी चाहिये। जाँच के पश्चात् पूरे विश्वास के साथ श्रद्धा करनी चाहिये, तभी बेड़ा पार होता है नहीं तो नहीं।

और अन्त में छठी सम्पत्ति है 'समाधान'। मन को बाहर की सभी बातों से हटा कर ध्यान में लगा देने की शक्ति। मन यदि बाहर की बातों में फँसा रहे, उन्हीं की बातें सोचता रहे, तो ध्यान कभी होता नहीं। केवल ज्ञान से एकाग्रता प्राप्त नहीं होती। केवल अभ्यास से भी नहीं होती। ज्ञान और अभ्यास जब दोनों मिलें तब मन एकाग्र होता है। बाहर की बातों से मन को हटा देना, एकाग्र कर देना, ध्यान में मग्न हो जाना, ऐसी बातें हैं जिन्हें आप प्रतिदिन सुनते हैं परन्तु आज मैं इनके सम्बन्ध में योग के कुछ ऐसे भेद बताऊँगा जिन्हें योगी लोग वर्षों के तप और ध्यान से प्राप्त करते हैं। चित्त और मन दोनों जड़ हैं, स्वयं वे कोई कार्य नहीं करते, स्वयं उनमें कोई शक्ति नहीं। उनमें शक्ति आती है और वे काम करते हैं, उस समय जब आत्मा का प्रतिबिम्ब उनके ऊपर पड़ता है। यह प्रतिबिम्ब न पड़े तो मन कोई कार्य नहीं करता। मन न करे तो इन्द्रियाँ भी नहीं करतीं। मैं यह चश्मा लगाता हूँ न, इसलिए कि इससे दूर तक दिखाई देता है। परन्तु देखने का कार्य क्या यह चश्मा करता है? मैं आंखें बन्द कर लूँ तो चश्मा के वर्तमान रहने पर भी दिखाई नहीं देगा। परन्तु वास्तव में यह आँख भी कुछ नहीं देखती। आपने देखा होगा कि कई लोगों की आँखें हैं फिर भी वे देख नहीं पाते, देखने का कार्य आँख नहीं करती अपितु वह तन्मात्रा करती है, जो आँख के पीछे रहती है। परन्तु वास्तव में रूप तन्मात्रा भी नहीं देखती, देखता है मन--और मन भी नहीं देखता, उसे देखने की शक्ति देता है आत्मा। आत्मा अपनी शक्ति को हटा ले तो ये सब उपकरण किसी काम के नहीं रहते, कोई भी देख नहीं सकता। और जो दशा आँख की है वही नाक, कान, जिह्वा और दूसरे उपकरणों की है। मन के कारण वे कार्य करते हैं और मन काम करता है आत्मा के कारण। देखने वाला और सूँघने वाला, सुनने वाला और स्वाद लेने वाला वास्तव में आत्मा है। वह मिट जाये तो यह सब कुछ लाश बन जाता है। पाँच कर्मेन्द्रियाँ पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ उनके पीछे खड़ी हुई पाँच तन्मात्रायें, उनके पीछे खड़ी हुई बुद्धि, इसके पीछे खड़ा हुआ मन, और उसके पीछे खड़ा हुआ चित्त--ये सब जड़ हैं। केवल उनके पीछे खड़ा हुआ आत्मा ऐसी वस्तु है, जो प्रकृति नहीं। यह समझता है, 'मैं ही चित्त हूँ, मैं ही मन हूँ।' यह कोरे भ्रम के अतिरिक्त और कुछ है नहीं। चित्त और मन का स्वभाव है देखी, सुनी और जानी बातों को याद रखना, उनके सम्बन्ध में सोचते रहना, और फिर उनमें ठहर जाना। योगियों की भाषा में इसे 'परिख्या' (बार बार याद करना), 'प्रवृत्ति' (झुकाव या लगाव हो जाना) और 'स्थिति' (ठहर जाना) कहते हैं। चित्त की वृत्तियाँ पाँच हैं-'क्षिप्त' अर्थात् रजोगुण और तमोगुण में डूबे रहना, दूसरी 'निक्षिप्त' अर्थात् सात्विक बातों और सात्विक भाव में डूबे रहना, तीसरी 'मूढ़' अर्थात् सात्विक, तामसिक या राजसिक किसी भाव का न रहना, घोर नींद में सो जाना, चौथी 'एकाग्र' अर्थात् जो बात हम चाहते हैं, उसके अतिरिक्त मन को और किसी ओर न जाने देना, और पाँचवीं 'निरुद्ध' अर्थात् सभी विचारों इच्छाओं और भावनाओं का अन्त हो जाना, केवल अपने आप में खो जाना। पहली तीन दशायें योग में कुछ काम नहीं आतीं, काम आने की अपेक्षा उनमें रुकावट डालती हैं, दूसरी दोनों दशायें योग में काम आती हैं। पहली दशा योग की अवस्था को उत्पन्न करती है। एकाग्र होकर मन या चित्त योग के लक्ष्य की ओर बढ़ता है। दूसरी दशा योग का लक्ष्य है। इसमें वह महान् ज्योति दिखाई देती है जिसे योगी देखने का प्रयत्न करता है।

इस अन्तिम दशा को उत्पन्न करने और उस ज्योति को देखने की एक विधि यह है कि प्रातः जब सूर्य पूर्व के आकाश में उदय हो रहा हो तब अपने मकान की छत पर खड़े हो जाओ। सूर्य निकलने से कुछ समय पूर्व ही खड़े हो जाओ और उगते हुए सूर्य को देखो। एक क्षण के लिए सूर्य की आँख से आँख मिलाओ, फिर बन्द कर लो बन्द कर लेने पर भी चमकता हुआ सूर्य दिखाई देता रहेगा। जब दिखाई देना बन्द हो जाये तब फिर आँखें खोल दो, फिर सूर्य को एक क्षण देखो, फिर आँखें बन्द करके उस ज्योति को अपने अन्दर देखो, बार बार ऐसा करने से एक ओर शारीरिक लाभ होगा। सूर्य की किरणों के साथ आने वाली विद्युत आँखों के द्वारा शरीर में प्रविष्ट होगी, दूसरी ओर मानसिक लाभ होगा ज्योति का वह आधार आपको मिल जायेगा जिस पर आपको ध्यान जमाना है, जिस पर अपने मन को एकाग्र करना है।

वेद ने ईश्वर को ज्योतियों की ज्योति कहा है। सूर्य की ज्योति को देखने से आपको उस महान् ज्योति का थोड़ा सा संकेत मिल जायेगा। सायंकाल अथवा रात्रि के समय जब चहुँ ओर अंधेरा हो तब ध्यान में उस ज्योति को देखो, जो सूर्य में दृष्टिगोचर हुई थी। बार बार देखोगे, बार बार उस ज्योति का ध्यान करोगे, तो वह ज्योति भृकुटि में टिक जायेगी, जब भी नेत्र बन्द करोगे वह दिखाई देगी। जब ऐसी दशा उत्पन्न हो जाये, तब समझो कि मन को एकाग्र करने की पहली सीढ़ी चढ़ गये।

इसके पश्चात् भृकुटि में दिखाई देने वाली, इस ज्योति को लगातार देखते रहो। योग की भाषा में इसे आन्तरिक त्राटक कहते हैं। त्राटक का अर्थ है, आँख झपके बिना देखते रहना। अन्दर की ज्योति को निरन्तर देखते रहो। वहाँ अन्दर तो आँख झपकने का कोई प्रश्न ही नहीं। हाँ ध्यान की आँख को इधर उधर न होने दो, तब अन्दर से अद्भुत ध्वनियाँ सुनाई देने लगेंगी।

कभी ऐसा प्रतीत होगा जैसे नदी बही जाती हो, कभी ऐसे जैसे ऊपर से पानी गिर रहा हो, कभी ढोल की ध्वनि सुनाई देगी। कभी मृदंग की, कभी वंशी बज उठेगी, कभी सितार-नाना प्रकार के बाजों की ध्वनियाँ सुनाई देने लगेंगी-यही वे ध्वनियाँ हैं जिन्हें 'अनहद बाजे' कहते हैं, ऐसे बाजे जिन्हें कोई बजाता नहीं। अभ्यास करने वाले जब भी चाहें, इन ध्वनियों को सुन सकते हैं, परन्तु ध्यान रक्खो ये सब ध्वनियाँ और वह ज्योति जिसे तुम ध्यान में देखते हो, जड़ वस्तुयें हैं वे केवल इसलिए हैं कि आपके मन में आगे बढ़ने की श्रद्धा उत्पन्न हो। इन्हें देखते हुए और सुनते हुए आगे बढ़ो उसी ज्योति में अधिक तीव्र बड़ी ज्योति दिखाई देगी कभी ऐसा प्रतीत होगा कि बहुत बड़ी अग्नि जल उठी है, कभी ऐसा कि कितने ही सूर्य चमक उठे हैं कभी ऐसे कितने ही जुगनू (पटबीजने) एक साथ जगमगा उठे हैं-ऐसे कई खेल दिखाई देंगे परन्तु ये सब की सब वस्तुयें भी जड़ हैं, इनको देख कर रुको मत, आगे बढ़ो उसी ज्योति में जो तुम्हें दिखाई देती है, तब एक विशेष प्रकार की गन्ध आने लगेगी। ऐसी गन्ध जो बाहर संसार में कहीं पर नहीं-तब ऐसा प्रतीत होगा जैसे किसी ने तुम्हारे सिर पर आशीर्वाद का हाथ रख दिया है। आशीर्वाद के मिलते ही सब कुछ गुम हो जायेगा। सून्न हो जायेगा सब कुछ। यह दशा जब उत्पन्न हो जाये तब समझो कि दूसरी सीढ़ी चढ़ गये जो परन्तु पहली हो या दूसरी- सीढ़ी तो लक्ष्य नहीं अभी और आगे बढ़ो, तब अहंकार दिखाई देगा, यह तीसरी सीढ़ी है। तब आत्मा अलग दिखाई देगा शरीर अलग, ऐसा प्रतीत होगा कि आत्मा के अतिरिक्त सब कुछ जड़ है यह चौथी सीढ़ी है, तब और आगे बढ़ो एक और सम अवस्था में निर्गुण प्रकृति दृष्टिगोचर होगी, इसमें रंग नहीं, रूप नहीं, गन्ध नहीं-कुछ भी नहीं, दूसरी ओर आत्मा दिखाई देगा चमकता हुआ। उस आत्मा का सहारा लेकर आगे बढ़ो, पाँचवीं सीढ़ी की ओर चलो परमात्मा की ओर-क्योंकि परमात्मा का दर्शन केवल आत्मा ही कर सकता है। मन बुद्धि अहंकार यह शरीर सब जड़ है, जड़ को परमात्मा दिखाई नहीं देता, आत्मा को दिखाई देता है। क्या है वह परमात्मा यह बताने की आवश्यकता नहीं। कोई इसका वर्णन नहीं कर सकता। केवल इतना कहना चाहिये कि वह अनन्त है, उसके अन्दर अनन्त आनन्द है। उसको देखने के पश्चात् और कुछ देखना शेष नहीं रहता, उसको पाने के पश्चात् कुछ पाना शेष नहीं रहता।

यह है षट् सम्पत्ति। विधि मैंने बता दी जिसके भाग्य में है वह अभ्यास करे। लगातार अभ्यास करने से सफलता मिलेगी अवश्य। जैसा कि मैंने पहले कहा महर्षि दयानन्द और जगद्गुरु शंकराचार्य दोनों ने ब्रह्म को पाने के लिये चार साधनों को आवश्यक कहा है। 'षट् सम्पत्ति' तीसरा साधन है। चौथे साधन की बात कहने से पूर्व, एक बात आसन के सम्बन्ध में सुनिये। *('शंकर और दयानन्द' से, क्रमशः)*

काव्यायन

सरला माँ का महाप्रयाण

❑गौरीशंकर वैश्य 'विनम्र'

पंच तत्वमय देह का, होता निश्चित अंत।
परम आत्मा से मिलन, जीवन धर्म अनंत।

पंचतत्व सम्मिलन से, जीवन पाता जीव।
तत्व विलग होना मरण, देता शोक अतीव।

पूज्या सरला आर्य माँ, गयीं जगत को छोड़।
परम तत्व को पा लिया, नाते-रिश्ते तोड़।

विद्यमान हैं आज भी, सूक्ष्म तत्व ले रूप।
जन्म-मृत्यु कुछ भी नहीं, केवल छाया-धूप।

सरला ने सिंचित किया, हरा-भरा परिवार।
निज पति वेद प्रकाश को, सौंप गयीं सब भार।

बहुएँ, पोते, पोतियाँ, सुत ज्यों श्रवण कुमार।
सरला माँ ने मुक्ति ली, सारा कर्ज उतार।

अनुपा, निमिषा, रश्मि, शशि, अमित और आलोक।
सरला माँ को ध्याइये, क्यों करते हो शोक।

सरला भाभी मातु सम, मुझे दिया सुस्नेह।
मैंने पद-स्पर्श कर, पाया आशिष-मेह।

यथा नाम था, गुण तथा, सरला सरल सुजान।
समझ बूझ सबको दिया, ज्ञान, मान, सम्मान।

आना, मिलना जगत में, जोड़ी बन हो मेल।
साथ छोड़ना बीच में, काल नियति का खेल।

जुड़ें आप सब 'ओम' से, ले न श्वास अवकाश।
धैर्य-शांति धारण करें, भ्राता वेद प्रकाश।

सरला माँ को ईश दें, आर्य लोक में शांति।
शब्द-सीख की हृदय में, फीकी पड़े न कांति।

-117, आदिल नगर, लखनऊ-22

जीवन चलता जाता है

❑रमा आर्य 'रमा'

उगता सूरज पूरब से पश्चिम में ढल जाता है।
जीवन चलता जाता है, जीवन चलता जाता है।
जीवन की गोधूली में बादल जल बरसाएँ।
मदिर हवाओं के झोंके मन में उमंग भर जाएँ।
थपकी देता चन्द्र कहीं तो तारे गीत सुनाएँ।
काल कर्म के गति बंधन को कोई जान न पाए।
चलता रहता नियति चक्र मन समझ न पाता है।
जीवन चलता जाता है, जीवन चलता जाता है।
सपनों की सौगात बटोर जीवन निशा है आती।
डोर पकड़कर आशाओं के झूले खूब झुलाती।
बीते दिन और रातें बीतीं बीता सांझ सवेरा।
बीत गया मधुमास कहीं पतझड़ ने डाला डेरा।
बचपन गया जवानी बीती वृद्धापन मुसकाता है।
जीवन चलता जाता है, जीवन चलता जाता है।
जीवन के गलियारों में हम रिश्ते खूब बनाते।
पाने खोने में हम जिनके गम और खुशी मनाते।
रहे बांटते सुख दुख अपने ममता प्यार लुटाते।
कर्मबिंदु से सिंचित कर मन फूल खिलाते।
जीवन एक पहेली कोई जिसको बूझ न पाता है।
जीवन चलता जाता है, जीवन चलता जाता है।
आया है जो आज यहाँ पर वह तो कल जाता है।
पाया है जो भी इस जग से जग में ही रह जाता है।
चला गया सो चला गया संग कौन किसी के जाता है।
अपने हिस्से की सांसों का हर कोई साथ निभाता है।
शेष दिनों की छलना से जो पल पल छलता जाता है।
जीवन चलता जाता है, जीवन चलता जाता है।

-417/10, निवाजगंज, चौक, लखनऊ

देह के बंधन

❑श्रीशरत्न पाण्डेय

देह के बंधन सरल सब छोड़कर,
जीव चल देता न जाने कब किधर।
एक पादप कीट पहले पग जमाता,
छोड़ता पीछे के पैरों को अनंतर।
कुछ नहीं है रिक्त अंतर या भटकना,
एक शाश्वत चक्र चलता है निरंतर।
पर कहो उनके लिए यह ज्ञान कैसा,
देह स्मृति की उठाए जो मरम पर।
कर्म फल का खेल जाने कौन कैसे,
सब सभी को क्या विदित होता कभी।
गर्भ में जो देह रचता, अस्थि मज्जा,
जाति आयु भोग का ज्ञाता वही।
किंतु आयु भी कभी लगती कठिन,
जैसे पतझड़ ठहर जाए उम्र भर।
कूटती धान को गेहूँ पीसती,
गीत दिनकर के उदय के पूर्व के।
खिलखिलाती अनुकरण करती सदा,
वेद पथ सरला अकिंचन गर्व से।
एक ही व्रत एक ही तप एक सागर,
पार जिसके आ सके ना लौट कर।
देह के बंधन सरल सब छोड़कर,
जीव चल देता न जाने कब किधर।

417/10, निवाजगंज, चौक, लखनऊ

मेरी दीदी

❑सुषमा मिश्र

कभी लगती थी, दादी अम्मा।
तो कभी डाँटती थी जैसे हो मेरी मम्मा।
कभी गुस्सा हो तो कभी रूठ जाती थी,
तो कभी-प्यार से बुलाती थी।
कभी टप-टप आँसू बहाती थी,
तो कभी खिलखिलाती थी
दिल की बड़ी ही नेक थी-
सच कहूँ तो मेरी दीदी लाखों में एक थी।

-बहर, जिला-हरदोई

हर्ष-चतुष्पदी

❑बाँके बिहारी 'हर्ष'

हर्ष को भी समझो घड़ी चलते रहना है काम,
घड़ी को है कहाँ घड़ी भर भी विश्राम,
भूलकर भी अगर घड़ी हो जाय जाम-
तो समझ लो, संसृति का हुआ काम तमाम।।

रावण और दुर्योधन विकट रणबंका,
मगर राम और कृष्ण का ही बजता है डंका।
दूर जाने की जरूरत नही बनारस में भी है लंका,
समाधान खोजना ही होगा कैसी भी हो शंका।।

-अवध मोटर वर्क्स, सिविल लाइन्स, फैजाबाद

कालजयी काव्य

विकल रागिनी

❑महाकवि जयशंकर 'प्रसाद'

इस करुणा कलित हृदय में
अब विकल रागिनी बजती
क्यों हाहाकार स्वरों में
वेदना असीम गरजती ?

मानस-सागर के तट पर
क्यों लोल लहर की घातें
कल-कल ध्वनि से हैं कहती
कुछ विस्मृत बीती बातें ?

आती है शून्य क्षितिज से
क्यों लौट प्रतिध्वनि मेरी
टकराती बिलखाती - सी
पगली - सी देती फेरी ?

क्यों व्यथित व्योम-गंगा-सी
छिटका कर दोनों छोरें
चेतना - तरंगिनि मेरी
लेती हैं मृदुल हिलोरें।

बस गयी एक बस्ती है
स्मृतियों की इसी हृदय में
नक्षत्र - लोक फैला है
जैसे इस नील निलय में।

ये सब स्फुलिंग हैं मेरी
इस ज्वालामयी जलन के
कुछ शेष चिन्ह हैं केवल
मेरे उस महा मिलन के।

शीतल ज्वाला जलती है
ईंधन होता दृग-जल का
यह व्यर्थ साँस चल-चल कर
करती है काम अनिल का।

वाडवज्वाला सोती थी
इस प्रणय-सिंधु के तल में
प्यासी मछली-सी आँखें
थीं विकल रूप के जल में।

बुलबुले सिन्धु के फूटे
नक्षत्र - मालिका टूटी
नभ-मुक्त-कुन्तला धरणी
दिखलाई देती लूटी।

छिल-छिल कर छाले फोड़े
मल-मल कर मृदुल चरण से
धुल-धुल कर वह रह जाते
आँसू करुणा के कण से।

इस विकल वेदना को ले
किसने सुख को ललकारा
वह एक अबोध अकिंचन
बेसुध चैतन्य हमारा।

अभिलाषाओं की करवट
फिर सुप्त व्यथा का जगना
सुख का सपना हो जाना
भीगी पलकों का लगना।

इस हृदय-कमल का घिरना
अलि-अलकों की उलझन में
आँसू - मरन्द का गिरना
मिलना निश्वास-पवन में।

मादक थी मोहमयी थी
मन बहलाने की क्रीड़ा
अब हृदय हिला देती है
वह मधुर प्रेम की पीड़ा।

सुख आहत शान्त उमंगें
बेगार साँस ढोने में
यह हृदय समाधि बना है
रोती करुणा कोने में।

चातक की चकित पुकारें
श्यामा-ध्वनि सरल रसीली
मेरी करुणाद्र - कथा की
टुकड़ी आँसू से गीली

(आँसू से)

काल-चक्र विकराल

❑दयानन्द जड़िया 'अबोध'

काल-चक्र विकराल, जो देता दुख-भार है,
वय का करे न ख्याल, शोक प्रिया का डाल कर।
दोष स्वयं के भाग्य का।।

लेता शिशु-माँ छीन, कभी वृद्ध जन की प्रिया,
षोडसि कभी नवीन, करे गमन सुरलोक को।
मति अबोध हैरान है।।

जैसे यात्रा-रेल, तैसे जीवन मनुज का,
बस क्षण भर को मेल, आते जाते पथिक गण।
कोई अपना कब हुआ।।

करे रोग से मुक्त, पर पीड़ा दे विरह की,
कौन दुःख से युक्त, होगा कहाँ विचार यह।
चक्र काल का चल रहा।।

सुख-दुख मिलन वियोग, देता है दिन-रात ज्यों,
रहते जग के लोग, करणी हरि की मान कर।
विवश 'अबोध' निहारता।।

-चन्दा मण्डप, 370/27, हाता नूरबेग, सआदतगंज, लखनऊ

सरला जी की अंतिम यात्रा के परिदृश्य

15 मार्च, बुधवार को रात्रि 12 बजने के 10 मिनट पूर्व सरला जी की जीवनदायिनी किरणों ने स्वयं को समेट लिया

अंत्येष्टि संस्कार

१६ मार्च, गुरुवार को उनकी इच्छा के अनुरूप वैदिक विधान से अन्त्येष्टि संस्कार किया गया। अच्छी तादाद में उपस्थित पारिवारिक जनों की मौजूदगी में ईश्वर प्रार्थना के वेदमंत्रों के पाठ के साथ उनके शव को शववाहन द्वारा भैंसाकुण्ड ले जाया गया। संस्कार मर्मज्ञ जाने माने विद्वान् पं.दीनानाथ शास्त्री जी की देखरेख और आचार्यत्व में पुष्कल मात्रा में देशीघी, हवनसामग्री, कर्पूर इत्यादि की सहायता से संस्कारविधि में निर्धारित प्रक्रिया और मंत्रों के उच्चारण के मध्य बड़े पुत्र आलोक जी एवं कनिष्ठ पुत्र अमित जी ने अग्न्याधान किया। तत्पश्चात् समस्त उपस्थित जनों ने मंत्रपाठ करते हुए 'स्वाहा' की ध्वनियों से वायुमंडल को गुंजायमान करते हुए आहुतियाँ दीं। अंत में संस्कारविधि की व्यवस्था के अनुसार सभी व्यक्तियों ने शान्तिप्रार्थना की। यह प्रार्थना भी श्री शास्त्रीजी ने अथर्ववेद के सुंदर मंत्रों के उच्चारण के साथ पूरी की। अश्रुपूर्ण नेत्रों से सभी ने सरला जी को अंतिम नमन किया।

पारिवारिक जनों ने अन्त्येष्टि के पश्चात् घर वापस आने पर यज्ञ की व्यवस्था पहले से ही कर रखी थी। स्नानोपरान्त संक्षिप्त यज्ञ करके वायुमंडल को शुद्ध तथा आत्मा को प्रबुद्ध करने का प्रयास किया गया।

शान्ति यज्ञ

१८ मार्च, शनिवार- शान्तियज्ञ एवं श्रद्धांजलि सभा के मौके पर बड़ी संख्या में उपस्थिति के बावजूद सभी मास्क लगाये हुए थे तथा दूरी बनाये रखने का प्रयास कर रहे थे। यज्ञ का स्थान ठीक मंदिर के सामने किया गया। निमिषा ने सुंदर रंगोली की रचना की। यज्ञवेदी पर आचार्य पं.दीनानाथ शास्त्री के अलावा परिवार के सदस्य उपस्थित थे जिनमें मुख्य यजमान आलोक-शशि, अमित-रश्मि के अतिरिक्त निमिषा वाजपेयी, अनूषा त्रिपाठी, सुषमा मिश्र(हरदोई), ऊर्मिला द्विवेदी(कछोना), वेदांश वाजपेयी(चीकू), वेदांजलि वाजपेयी(पीहू) यज्ञ पर बैठे। संस्कार विधि के अनुसार सारी प्रक्रिया शास्त्रीजी ने सम्पन्न कराई तथा स्व.सरला जी, जिन्हें वे सदैव चाचीजी कहा करते थे, से संबन्धित अनेक स्मृतियों को सजीव कर दिया। श्रद्धांजलि के रूप में सभी आये हुए नर-नारियों ने यज्ञ में आहुतियाँ दीं। पुष्पहार से युक्त सरलाजी का चित्र एक मेज पर रखा था तथा स्फुट फूल थालियों में रखे गये तथापि श्रद्धांजलि हेतु यज्ञ में आहुतियाँ देने का ही अनुरोध किया गया।

यज्ञोपरान्त डॉ.वेद प्रकाश आर्य ने सरलाजी के जीवन की मुख्य बातों पर संक्षिप्त प्रकाश डाला तथा समयाभाव को देखते हुए यह अनुरोध किया कि वे ही इस अवसर पर वक्तव्य दें जिनका सरलाजी से प्रत्यक्ष संबन्ध रहा है। सभी लोग भावाभिभूत हो उठे जब सबसे पहले चीकू (वेदांश वाजपेयी) ने माइक पर कहा- बड़ी नानी बहुत प्यार करती थीं। श्रीमती निमिषा वाजपेयी ने कतिपय स्मृतियों को ताजा किया। इस अवसर पर जिन्होंने अपने भावोद्गार सुनाये, उनके नाम हैं- श्रीमती शशि त्रिपाठी, श्रीमती रामा आर्य 'रमा', श्री पं.शचीन्द्र मिश्र शास्त्री(सीतापुर) आचार्य विश्वव्रत शास्त्री, प्रेमप्रकाश शुक्ल शास्त्री (हरिद्वार), चन्द्र प्रकाश शुक्ल (हरिद्वार), श्रीशरत्न पाण्डेय, गौरीशंकर वैश्य 'विनम्र', पालप्रवीण जी आदि। सभी वक्ताओं के भावपूर्ण विचारों ने लोगों को विह्वल बना दिया। श्री ज्ञानेन्द्र दत्त त्रिपाठी, वी.एस.पाण्डे एवं श्री उमाशंकर वाजपेयी की मौजूदगी सभी के लिए सान्त्वना प्रद रही। इसके अतिरिक्त आर्य समाजों के प्रतिनिधि-कान्ति जी, डोरीलाल आर्य (इन्दिरा नगर), आनन्द चौधरी, डॉ.अरविन्द नाथ पाण्डे (डालीगंज) डॉ. भानुप्रकाश आर्य आर्य प्रतिनिधि सभा उ.प्र. के नाम महत्वपूर्ण हैं।

अनमोल रत्न जो कोरोना काल में बिछड़े

श्री सतीश चन्द्र बिसारिया- आर्य समाज, आदर्श नगर, लखनऊ में विभिन्न पदों पर रहकर सेवा करने वाले कर्त्तव्यनिष्ठ एवं क्रियाशील श्री सतीश चन्द्र बिसारिया का २२ मई २०२१ को आकस्मिक निधन हो गया। आर्य समाज आदर्श नगर के साथ ही जिला सभा के प्रधान पद को आपने सुशोभित किया था। आर्य समाज, आदर्श नगर द्वारा श्री बिसारिया के निधन पर दुःख व्यक्त किया गया तथा श्रद्धांजलि दी गई। *(प्रधान/मंत्री)*

श्री मोहिन्दर भण्डारी- श्री मोहिन्दर भण्डारी का निधन दिल्ली के समीप एक अस्पताल में दिनांक २५.०५.२१ को हो गया। आपकी सहधर्मिणी श्रीमती मधुर भण्डारी आर्य लोक वार्ता की संरक्षिका हैं। लखनऊ आगमन पर तीन वर्ष पूर्व आर्य समाज अलीगंज में उनका भव्य स्वागत किया गया था। श्री मोहिन्दर भण्डारी की आत्मा की शांति हेतु अलीगंज वैदिक सत्संग में यज्ञ एवं प्रार्थना की गई। आर्य लोक वार्ता की श्रद्धांजलि! *(अभिषेक, अलीगंज)*

श्री राजीव कुमार- आर्य समाज के वैदिक प्रवक्ता श्री धर्मेन्द्र आर्य, सत्यनगर, रायबरेली के सुपुत्र श्री राजीव कुमार का २०.०४.२१ को ४४ वर्ष की आयु में निधन हो गया। आपने फिरोज गाँधी इंस्टीट्यूट ऑफ इंजीनियरिंग, रायबरेली में एसोशिएट प्रोफेसर तथा आर्य समाज रायबरेली के मंत्री के रूप में सेवाएँ कीं। आप अपने पीछे पत्नी, एक पुत्र तथा पुत्री एवं शोकसंतप्त परिवार को छोड़ गये हैं। हार्दिक श्रद्धांजलि! *(पाल प्रणीत)*

श्री सत्यव्रत कटियार- आर्य लोक वार्ता के हितैषी अलीगंज लखनऊ निवासी स्वर्गीय आर.डी.कटियार एवं श्रीमती प्रमोद कुमारी के कनिष्ठ पुत्र श्री सत्यव्रत कटियार का दिनांक २५.०४.२१ को दिल्ली हॉस्पिटल में आकस्मिक निधन हो गया। अलीगंज वैदिक सत्संग में शोक सभा आयोजित कर दिवंगत आत्मा की शान्ति हेतु प्रार्थना की गई। आर्य लोक वार्ता की हार्दिक श्रद्धांजलि!

टाण्डा-समाचार

आर्य समाज टाण्डा अम्बेडकरनगर का वार्षिकोत्सव

भक्ति ज्ञान और कर्म की त्रिवेणी प्रवाहित

शिवरात्रि-ऋषिबोध पर्व की पावन वेला में आर्य समाज टाण्डा अम्बेडकरनगर ने अपना वार्षिकोत्सव उमंग, स्नेह और श्रद्धापूर्ण वातावरण में मनाया।

प्रतिदिन परम्परागत वैदिक यज्ञ आचार्यों द्वारा सम्पन्न कराया गया। इस अवसर पर उद्बोधन हेतु एक ओर प्रख्यात विद्वान आचार्य पं.वेद प्रकाश श्रोत्रिय जी अपनी अलंकारिक और चमत्कार प्रधान ओजस्वी शैली में वैदिक धर्म के गूढ़ और सूक्ष्म मन्तव्यों की सरल, सुबोध और तार्किक व्याख्या करते देखे गये तो दूसरी ओर सार्वदेशिक सभा के प्रधान स्वामी आर्यवेश जी महाराज अपने आध्यात्मिक विचारों को समाज और देश के लिए उपयोगी बनाते हुए प्रवचन देते रहे।

ज्ञान और भक्ति की इन दो धाराओं से इतर कर्म की भावना को आन्दोलित करने वाली रामकथा गायक श्री कुलदीप आर्य द्वारा सुनाई गई। यह रामकथा इतनी भावप्रधान और रोचक थी कि कई दिनों तक जन समुदाय इस कथामृत का भावमग्न होकर रसपान करता रहा।

उत्सव आर्य समाज टाण्डा अम्बेडकरनगर के प्रधान कर्मयोगी श्री आनन्द कुमार आर्य की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ जिसमें शिक्षक, शिक्षिकाओं, छात्र-छात्राओं के साथ नगर एवं पार्श्ववर्ती जनपदों की आर्य जनता ने भाग लेकर अपने जीवन को कृतकृत्य किया।

प्रधान जी ने समस्त उत्सव प्रेमियों का स्वागत एवं धन्यावाद किया।

राजस्थान-समाचार

कोरोना मुक्ति यज्ञ रथ अभियान

कोटा, ६ जून। आर्य समाज कोटा द्वारा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा तथा दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा की प्रेरणा से विभिन्न क्षेत्रों में सेवा व सहायता के कार्य प्रतिदिन किये जा रहे हैं। आर्य उपप्रतिनिधि सभा कोटा संभाग के मीडिया प्रभारी अग्निमित्र शास्त्री ने बताया कि संभागीय प्रधान अर्जुनदेव चड्ढा के निर्देशन में सेवा सहायता के कार्य अभियान चलाकर किये जा रहे हैं। शास्त्री जी ने बताया कि आज पर्यावरण शुद्धि और स्वच्छ जलवायु के लिए महावीर नगर द्वितीय से यज्ञ रथ अभियान चलाया गया। इस अवसर पर यज्ञ रथ के संयोजक राधावल्लभ पाठीर व संभागीय महामंत्री अरविन्द पाण्डेय ने जानकारी देते हुए बताया कि महावीर नगर द्वितीय स्थित ओपेरा हास्पिटल के क्षेत्रों में गलियों मोहल्लों व चौराहों से यज्ञ रथ गुजरा।

यज्ञ रथ के साथ आर्य कार्यकर्ता किशन आर्य हरियाणा, विष्णु गर्ग चल वाहन यज्ञ रथ पर वेद मंत्रोच्चार पूर्वक हवन कर रहे थे। महिला मंत्री सुशीला कुर्मी, उमेश कुर्मी व आर्य समाज गायत्री विहार के मंत्री उमेश पूर्वी ने सर्वप्रथम ईश्वर स्तुति प्रार्थना मंत्रों द्वारा ईश्वर की स्तुति प्रार्थना करते हुए मंत्रोच्चार पूर्वक यज्ञ कुंड में अग्नि प्रज्ज्वलित की। यज्ञ रथ के माध्यम से आमजन को पर्यावरण बचाओ वृक्ष लगाओ का संदेश दिया गया। दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के महामंत्री विनय आर्य ने कहा कि हर वृक्ष ऑक्सीजन की फैक्ट्री है। प्रत्येक जन को वातावरण स्वच्छ करने के लिए यज्ञ करना चाहिए साथ ही वृक्ष लगाना चाहिए।

कार्यक्रम के सहसंयोजक किशन आर्य ने कहा कि यज्ञ रथ गलियों में जहां गुजरा वहां के लोगों ने अपने घरों से बाहर आकर विशेष औषधियों से युक्त हवन सामग्री से गायत्री मंत्र का उच्चारण करते हुए हवन कुंड में आहुतियां डलीं व कोरोना से मुक्ति तथा पर्यावरण शुद्धि के लिए प्रार्थना की। *(अरविन्द पाण्डेय)*

लखनऊ-समाचार

पितामह के जन्मदिवस पर पौत्री का शुभागमन

योगनिष्ठ श्री पाल प्रवीण का ८५वाँ जन्मदिवस दिनांक २०.०५.२१ को आचार्य विश्वव्रत शास्त्री जी के आचार्यत्व एवं ध्यानयोग विशेषज्ञ श्री सेवकराम आर्य के सान्निध्य में सम्पन्न हुआ। आयोजन में पारम्परिक यज्ञ के उपरान्त अनेक वक्ताओं एवं हितैषियों ने पाल प्रवीण जी के व्यक्तित्व की विशेषताओं पर प्रकाश डाला और उनके दीर्घायुष्य हेतु शुभकामनाएँ व्यक्त कीं। इस अवसर पर श्रीमती कमलेश पाल, श्री अभिषेक एवं श्रीमती गीतांजलि के अलावा पाल प्रवीण जी की सुपौत्री सुश्री देविका जो दिल्ली की एक विख्यात कम्पनी में उच्च पद पर सेवारत हैं; पितामह के जन्म दिवस पर बधाई देने लखनऊ आईं। देविका के आगमन से परिवार में हर्ष और उल्लास का वातावरण निर्मित हुआ। देविका ने इस अवसर पर 'आर्य लोक वार्ता', सत्यनारायण ट्रस्ट इत्यादि संस्थाओं को धनराशि दान स्वरूप प्रदान की। इस अवसर पर 'आर्य लोक वार्ता' के प्रधान सम्पादक डॉ.वेद प्रकाश आर्य जो स्वयं अस्वस्थता के कारण उपस्थित नहीं हो सके थे, निम्नांकित छंद लिखकर भेजा जिसकी सभी ने सराहना की-

काल शिला पर ज्ञान की दान की,
योग की ले तदवीर नयी।
प्रियपाल के पुत्र श्री पाल प्रवीण ने
खींच दी एक लकीर नयी।

संस्थापक
स्व. स्वामी आत्मबोध सरस्वती

संरक्षक एवं निर्देशक
कर्मयोगी श्री आनन्द कुमार आर्य

प्रधान संपादक
डॉ० वेद प्रकाश आर्य
कार्यालय-638/181डी,
शिवविहार कालोजी, पो.-सीमैप,
पिकनिक स्पाट रोड, लखनऊ-226015
9450500138

संपादक
आलोक वीर आर्य
: 8400038484

प्रसार व्यवस्थापक
अमित वीर त्रिपाठी
: 9651333679

संवाद प्रमुख
गौरीशंकर वैश्य 'विनम्र'
: 9956087585

विशेष कार्याधिकारी
श्रीमती निमिषा वाजपेयी
: 7310119999

प्रचार प्रमुख
श्री प्रेम चन्द शर्मा
: 8799521631

नवोन्मेष
श्री कृष्णा जी

ई-मेल
aryalokvarta@gmail.com

सहयोग राशि

सामान्य सदस्य	–	100 रु. वार्षिक
सक्रिय सदस्य	–	200 रु. वार्षिक
विशिष्ट सदस्य	–	500 रु. वार्षिक
होता सदस्य	–	2,000 रु. वार्षिक
संरक्षक	–	20,000 रु.
प्रतिष्ठापक	–	75,000 रु.

सहयोग राशि निम्नलिखित बैंक की किसी भी शाखा में 'आर्य्य लोक वार्ता' खाते में जमा कर हमें सूचित कर सकते हैं। विवरण इस प्रकार है-

बैंक-बैंक आफ बड़ौदा, विभव खण्ड, गोमती नगर, लखनऊ।
IFSC - BARBOVIBHAV
खाता धारक – आर्य लोक वार्ता
खाता सं.-46900 1000 30651
खाते का प्रकार-बचत खाता

प्रतिष्ठापक
श्री अरविन्द कुमार आर्कीटेक्ट, लखनऊ
श्री जे.पी.अग्रवाल, कनखल, हरिद्वार

संरक्षक
डॉ.भानु प्रकाश आर्य, लखनऊ
श्रीमती बलबीर कपूर, लखनऊ
श्रीमती गिनी स्वरूप, नई दिल्ली
श्रीमती मधुर भण्डारी, नई दिल्ली
श्रीमती कमलेश पाल, लखनऊ,
कर्नल पाल प्रमोद, मेरठ
आचार्य आनन्द मनीषी, लखनऊ
श्रीमती रामा आर्य 'रमा', लखनऊ
श्री सर्वमित्र शास्त्री, लखनऊ

परामर्श एवं सहयोग
डा. सत्य प्रकाश, सण्डीला, हरदोई

सलाहकार
श्री आनन्द चौधरी एडवोकेट, लखनऊ

मुद्रक, स्वामी और प्रकाशक डॉ. वेद प्रकाश आर्य के लिए क्रियेटिव ग्राफिक्स, बी-2, हिमांशु सदन, 5-पार्क रोड, लखनऊ द्वारा मुद्रित तथा 'वेदाधिष्ठान' 539क/234 हरीनगर, (रवीन्द्रपल्ली) पो.-इन्दिरानगर, लखनऊ से प्रकाशित।

श्रीमती सरला आर्य

जीवन : उपलब्धि : संदेश

जनपद हरदोई के अन्तर्गत 'कछोना' (बालामऊ) के अतिप्रतिष्ठित कान्यकुब्ज ब्राह्मण द्विवेदी परिवार में सरला जी का जन्म हुआ था। आपके पिता पं.श्रीनिवास जी अपने पांच भाइयों में द्वितीय स्थान पर थे। संयोगवश आर्थिक दृष्टि से दुर्बल थे किन्तु अपनी सच्चाई, भलमनसाहत, सेवाभावना, शिष्टता आदि सद्गुणों के कारण सभी के स्नेह और आदर के पात्र बने तथा 'बापू' नाम से पुकारे जाने लगे। इन्हीं 'बापू' श्रीनिवास जी और श्रीमती जिया के यहाँ सन् १९४२ के आसपास जिस बालिका का जन्म हुआ- उसे 'यमुना' नाम मिला, जो विवाहोपरान्त 'सरला' हुआ क्योंकि 'यमुना' नाम पुरुषों और नारियों में समानरूपेण प्रचलित था।

'यमुना' से मेरा विवाह सन् १९५७ में सम्पन्न हुआ था। उस समय मैंने इण्टरमीडिएट परीक्षा उत्तीर्ण की थी। 'कछोना' में उस समय तक लड़कियों की

शिक्षा की कोई उचित व्यवस्था नहीं थी तथापि यमुना देवी ने कक्षा ५ तक पढ़ाई कर ली थी और पत्र इत्यादि अच्छी तरह लिख लेती थीं। वे प्रारंभ से ही सुंदर, स्वस्थ, कार्यकुशल मानी जाती थीं। यमुना से मेरा विवाह एक आदर्श विवाह था और यह प्रेमविवाह भी था। आदर्श विवाह इसलिए कि यह दहेजरहित विवाह था जिसमें किसी प्रकार की छहरौनी, वरीच्छा, तिलक इत्यादि की कोई रस्म नहीं हुई थी क्योंकि श्रीनिवास जी की आर्थिक स्थिति शून्य थी, उन्हें नगरवासियों और अपनी ससुराल- 'बस्यान' का ही सहारा था क्योंकि 'बस्यान' में उनके साले श्री छोटेलाल द्विवेदी अर्थात् यमुना देवी के मामा थे जो सम्पन्न भी थे और साहसी तथा दानशील भी थे। जिस तरह सादगी के साथ यमुना देवी और मेरा विवाह हुआ, वह मानवता की एक सुंदर मिसाल बनी।

उस क्षेत्र में अभी तक ऐसा कोई आदर्श विवाह नहीं हुआ था, और न आगे होगा, जिसमें इतनी सादगी और उत्तम विचारधारा रही हो। यह एक प्रेमविवाह भी था क्योंकि यमुना जी से मेरा पत्रव्यहार और वार्तालाप होता रहता था। हम दोनों एक दूसरे को हृदय से चाहने लगे थे। आर्थिक विपन्नता ही इस मार्ग में बड़ी बाधा थी। इस बाधा को दूर करने का सम्पूर्ण श्रेय मेरे पूज्य पिता पं.श्री देवदत्त त्रिपाठी वैद्य को जाता है, जो उस समय आर्य समाज, गोनी के प्रधान थे। एक दिन पिताजी ने मुझसे बुला कर पूछा था कि विवाह किसकी पसंद से होना चाहिए- लड़के-लड़की की अथवा माता-पिता की। मैंने पिताजी को बताया कि 'सत्यार्थ प्रकाश' के अनुसार विवाह लड़का-लड़की की पसंद से होना चाहिए। पिताजी को 'सत्यार्थ प्रकाश' से वह स्थल मैंने पढ़कर सुनाया। पिताजी ने कहा- अब तुम्हारा विवाह वहीं 'कछोना' से ही होगा। अतः पिताजी की इच्छानुसार बारात लेकर हमलोग कछोना गये और यमुना देवी ग्राम-गोनी, पो.-गोंडवा, जिला हरदोई में आ गईं।

प्रारंभ से ही कार्यकुशल और परिश्रमी होने के कारण सरला जी ने परिवार में अपना स्थान बना लिया। मेरी छोटी बहन रामा जी से सरला की बहुत पटती थी और रामा ने उनकी भरपूर सहायता और मार्गदर्शन भी किया। मेरी श्रद्धेया माता जी भी यही चाहती थीं कि बहू कार्यकुशल हो, घर का प्रबंध संभाल ले। सरला जी मेरी माताजी की कसौटी पर खरी उतरीं। मेरी माता जी का अंतिम संस्कार भी उन्हीं के द्वारा आजमगढ़ में हुआ।

सरला जी एक रूढ़िवादी पौराणिक परिवार से थीं किन्तु उनके माता-पिता अत्यंत प्रबुद्ध थे। अतः सरला जी को मेरे यहाँ आर्य समाजी वातावरण में स्वयं को ढालने में कोई कठिनाई नहीं हुई।

कुछ ही दिनों में उन्हें वैदिक संध्योपासना, ईश्वरप्रार्थना तथा यज्ञ हवन के मंत्रों का अच्छा अभ्यास हो गया। अतः परिवार में पारिवारिक संध्या तथा यज्ञ-हवन के विधान को उन्होंने आगे बढ़ाकर परिवार को एक सूत्र में बांधने का प्रयास किया। अंतिम समय तक संध्या वंदन वे करती रहीं। प्रत्येक लोकपर्व, व्रत, कथा इत्यादि में उन्होंने यज्ञ-हवन को अनिवार्य कर दिया। आर्य समाज के सभी विधानों का उन्हें पूरा ज्ञान था और उसका बिना हिचक अनुसरण करती थीं। उनके कुछ अनूठे प्रयासों की यहाँ हम चर्चा करना चाहते हैं-

१-'कछोना' उनकी पहली पसंद थी। उनका ध्यान बराबर कछोना विशेषकर छोटे भाई श्री रामप्रकाश जी के परिवार पर लगा रहता था और राम प्रकाश एवं

उनकी पत्नी श्रीमती ऊर्मिला भी उनका बेहद सम्मान करते थे। श्री रामप्रकाश जी के बड़े पुत्र सचिन ने बिना माता-पिता की सहमति के अपना विवाह कर लिया तथा विवाहोपरान्त अपनी नवविवाहिता पत्नी के साथ घर पर नहीं आये थे। यह बात उन्हें खटकती थी। सोचविचार कर विवाह संस्कार का उत्तर भाग अर्थात् वधू का पति के गृह पर स्वागत- का कार्यक्रम उन्होंने रखा। सचिन की स्वीकृति प्राप्त की तथा रामप्रकाश जी और उनकी पत्नी को तैयार किया। यज्ञकुंड, हवनसामग्री इत्यादि के साथ रामप्रकाश जी के आँगन में सुंदर कार्यक्रम हुआ, नववधू का स्वागत हुआ तथा परिवार में हर्ष का वातावरण निर्मित हो सका। इस घटना से सरला जी की कार्यकुशलता का अन्दाजा लगाया जा सकता है।

२-शिवविहार कालोनी में जब हमने किराए पर एक बड़े मकान में रहना प्रारंभ किया तो वहाँ घर में एक सुंदर मंदिर बना हुआ मिला। मंदिर को मंदिर बनाये रखने का निर्णय उन्होंने लिया। उक्त मंदिर में प्रकाश की व्यवस्था की गई और ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद, एकादश उपनिषद, रामायण, रामचरितमानस तथा दयानंद ग्रंथ संग्रह दोनों भाग, बृहद् सत्यार्थ प्रकाश, श्रीमद्भगवद्गीता जैसे धार्मिक ग्रंथ रखे गये, माता-पिता के साथ महर्षि दयानन्द सरस्वती और मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम के चित्र रखे गये। मंदिर का यह भव्य रूप उनकी देन है। आज माता-पिता के चित्रों के साथ उनका भी एक चित्र मंदिर में मौजूद है जहाँ अनवरत प्रकाश की व्यवस्था रहती है और उसी मंदिर के सामने यज्ञ हवन होता रहता है।

३-सरला जी के इन प्रयासों के फलस्वरूप प्रिय अमित तथा श्रीमती रश्मि ने प्रति रविवार को यज्ञ करने का व्रत लिया। उनके पुत्र 'मलयज' भी यज्ञ में बैठकर पूर्ण आस्तिक बने तथा सभी यज्ञ के मंत्रों का उच्चारण उन्होंने सीख लिया। आज भी यह नियम चला आ रहा है। वे नहीं होती हैं किन्तु उनकी प्रेरणा रूपी प्रतिच्छवि आज भी घर में विराजती है।

४-उन्होंने यह निर्देश पहले ही दे दिया था कि मेरी मृत्यु के पश्चात् कोई आडम्बर न करते हुए वैदिक विधान का पालन किया जाय। मृतकभोज की जगह आठ पूड़ियाँ, आलू की सब्जी, अचार तथा एक मीठे का पैकेट बनवा कर बँटवा दिया जाय। शान्तियज्ञ के उपरान्त उनकी इच्छानुसार ये पैकेट वितरित किये गये तथा काफी संख्या में भिक्षुओं तथा निर्धनों को दे दिये गये।

५-'आर्य लोक वार्ता' के प्रकाशन के बाद उसकी प्रेषण की अधिकांश व्यवस्था वे संभालती थीं। समाचार-पत्र पर डाक टिकट तथा पते चिपकाना इत्यादि कार्य स्वयं कर डालती थीं, उनका कहना था कि 'आर्य लोक वार्ता' का प्रकाशन बन्द नहीं होने देना।

६-आज सरला जी नहीं हैं, उनकी सेवा में, मैंने तथा परिवार के सभी सदस्यों ने प्राणों की बाजी लगा दी। वे मेरे लिए सबकुछ थीं किंतु मैं यह जानता था कि संयोग को वियोग में बदलना ही होगा, यह संसृति का नियम है। वे नहीं हैं, किन्तु न होकर भी वे हमारे आसपास ही रहती हैं और हमें जीवन के प्रत्येक क्षण के सदुपयोग की शिक्षा देती रहती हैं।

सरला जी को यह श्रेय प्राप्त होता है कि उनके सहयोग और प्रेरणा, प्रेम और विश्वास के बलपर मैंने लखनऊ विश्वविद्यालय से एम.ए.हिन्दी प्रथम श्रेणी (१९६१) तथा पी-एच.डी.(१९७३) में प्राप्त की थी। मुझे एक प्रख्यात शिक्षण संस्था डी.ए.वी.कालेज, आजमगढ़ और तदुपरान्त १९७७ से २००० तक जवाहर लाल नेहरू पोस्ट ग्रेजुएट कालेज, बाराबंकी तथा सेवानिवृत्ति के उपरान्त लखनऊ में १९९८ से 'आर्य लोक वार्ता' के प्रकाशन का अवसर मिला।

सरला जी का मेरा साथ, सहयोग, प्रेम विश्वास से परिपूर्ण बना रहा। ६४ वर्ष बाद १५ मार्च २०२१ को ईश्वर ने यह सूत्र तोड़ दिया और प्रेममालिका के सभी मोती बिखर गये हैं, तथापि इनकी आभा अनंतकाल तक बनी रहेगी।

-डॉ.वेद प्रकाश आर्य

वेदाश (चीकू) बड़ी नानी के साथ

श्रद्धांजलि

"गृहस्थ जीवन में रहते हुए भी श्रीमती सरला आर्य सामाजिक सरोकारों के प्रति समर्पित थीं। आर्य समाज के प्रति उनकी प्रगाढ़ श्रद्धा-भावना उन्हें सन् २००२ में आर्य समाज टाण्डा खींच लाई थी; जहाँ श्री मिश्रीलाल आर्य जन्म शताब्दी समारोह में अन्य कार्यक्रमों के साथ ही डॉ.वेद प्रकाश आर्य द्वारा सम्पादित दो पुस्तकों- (१) मिश्रीलाल आर्य : एक प्रेरक व्यक्तित्व (२) आत्मबोध उपदेशमृत का विमोचन होना था। 'आर्य लोक वार्ता' की वे कार्यालयाध्यक्षा थीं तथा पत्र के प्रेषण-कार्य का स्वयं संचालन करती थीं। जाते-जाते भी उनका ध्यान 'आर्य लोक वार्ता' की ओर था- उनका संदेश था-'आर्य लोक वार्ता' का प्रकाशन बन्द न होने पाये। सरला जी का जीवन भारतीय नारियों के लिए प्रेरणास्रोत बना रहेगा।"

-आनन्द कुमार आर्य, प्रधान आर्य समाज टाण्डा,
(पूर्व कार्यकारी अध्यक्ष, सार्वदेशिक आ.प्र.सभा)

"२७ सितम्बर, २०१८ को जब मैंने आर्य समाज मंदिर, डिफेंस कॉलोनी में 'सम्मान समारोह' का आयोजन किया, तो उसमें 'आर्य लोक वार्ता' के प्रधान सम्पादक डॉ.वेद प्रकाश आर्य को भी आमंत्रित किया था। यह सम्मान उन पत्र सम्पादकों के लिए था, जिनके साथ उनका परिवार भी आर्य प्रकाशन के इस महत् कार्यक्रम में संलग्न था। डॉ.वेद प्रकाश आर्य को यह सम्मान निश्चय ही उनकी जीवन संगिनी श्रीमती सरला आर्य के कारण मिलाथा- क्योंकि उनकी सर्वाधिक महत्वपूर्ण भूमिका 'आर्य लोक वार्ता' प्रकाशन में थी। यद्यपि अस्वस्थता के कारण वे स्वयं सम्मान ग्रहण करने हेतु नहीं आ सकीं थीं किन्तु उनकी सेवाओं को कभी भुलाया नहीं जा सकता है। उनके निधन से मुझे गहरा आघात लगा है। जो सम्भव है- वह सहायता भी मैं 'आर्य लोक वार्ता' के हितार्थ करता रहता हूँ। दिवंगत महान् आत्मा के प्रति मेरी श्रद्धांजलि!"

-ठाकुर विक्रम सिंह
राष्ट्रीय अध्यक्ष, राष्ट्र निर्माण पार्टी, नई दिल्ली

"डॉ.वेद प्रकाश आर्य लगभग १६ वर्ष आजमगढ़ में रहे। १९७७ में जब वे आर्य समाज आजमगढ़ के प्रधान के पद पर प्रतिष्ठित थे, उनकी नियुक्ति जवाहर लालनेहरू परास्नातक महाविद्यालय, बाराबंकी में हुई और वे आजमगढ़ से चले गये। अपने आजमगढ़ प्रवास काल में श्रीमती सरला आर्य निरंतर महिला आर्य समाज से जुड़ी रहीं। पारिवारिक सद्भावना और सामाजिकता की भावना उनमें कूट-कूट कर भरी हुई थी। आजमगढ़ के अनेक परिवार उनसे प्रेरणा और सहायता प्राप्त करते थे। निरन्तर महिला आर्य समाज आजमगढ़ से सम्बद्ध रहने के कारण सरला जी के निर्मल स्वभाव और सद्गुणों का मैं साक्षी रहा। मैं उनकी दिवंगत आत्मा की सद्गति के लिए ईश्वर से प्रार्थकर करता हूँ।"

-कपिलदेव राय
पूर्व प्रवक्ता, बेस्ली इंटर कॉलेज, आजमगढ़

"आर्य लोक वार्ता की कार्यलायाध्यक्ष, सर्वदा क्रियाशील श्रीमती सरला आर्य का हमारे बीच से चले जाना एक दुःखद घटना है, विशेषकर डॉ.वेद प्रकाश आर्य के सामाजिक कार्यक्रमों में उनकी पार्श्व भूमिका महत्वपूर्ण होती थी। आर्य समाज राजाजीपुरम के अनेक आयोजनों में उन्होंने अपनी उपस्थिति दर्ज की थी। हमारी आर्यसमाज के सक्रिय सदस्य श्री महेन्द्रदेव पाण्डे, श्रीमती मंजुला पाण्डे तथा उनकी दिवंगत माता श्रीमती ऊषा पाण्डेय सभी सरला जी का बड़ा सम्मान करते थे। ऐसी विभूति से समाज का वंचित हो जाना एक गहरी क्षति है फिर भी 'कालेन अश्वो वहति'- समय चक्र अपनी रफ्तार से चलता ही रहता है। मैं यथासंभव अपना योगदान प्रस्तुत करता रहता हूँ। यह मेरे लिए एक आत्मसंतोष का विषय है। श्रीमती सरला जी को हार्दिक श्रद्धांजलि!"

-आचार्य आनन्द मनीषी
आर्य समाज, राजाजीपुरम, लखनऊ

"चिरन्तन प्रेरणास्रोत श्रीमती सरला आर्य के निधन के समाचार से मैं आहत हूँ। जब मैं उन्हें शेखर अस्पताल में देखकर आया था, तो नहीं मालूम था, इतनी शीघ्र वे संसार को अलविदा कह देंगीं। उनके अभाव में डॉ.वेद प्रकाश आर्य का जीवन जटिल होगा तथापि ईश्वर की अनुकम्पा हम सबका सहयोग उनका सम्बल बनेगा। मेरे पिता आचार्य ओजोमित्र शास्त्री प्रायः उनके परिवार में संस्कारों हेतु जाते थे, वे सरला जी के आत्मीय भाव की प्रशंसा किया करते थे। मेरी हार्दिक श्रद्धांजलि! उनके निर्देशानुसार मैं आर्य लोक वार्ता के उत्थान हेतु सदैव तत्पर रहूगा और मेरा प्रयास होगा कि 'आर्य लोक वार्ता' की स्वाध्याय ज्योति निरंतर जलती रहे। यह एक पुण्य कार्य है।"

-सर्वमित्र शास्त्री
सत्यनारायण ट्रस्ट, जानकीपुरम, लखनऊ

"अपनी आदरणीया स्नेहिल बहन के निधन के समाचार ने मेरे अन्तर्मन को व्यथित कर दिया है। मैं जीजा जी डॉ.वेद प्रकाश आर्य को ऐसी घड़ी में दुःख की पीड़ा सहन करने की शक्ति प्रदान करने हेतु ईश्वर से कामना करता हूँ। सभी स्नेहीजन इस कठिन परिस्थिति में साहस एवं संयम प्राप्त करें- ईश्वर से यही प्रार्थना है। शत शत नमन!"

-सूर्य प्रकाश द्विवेदी
तिलक नगर, कछोना, बालमऊ, हरदोई